• वर्ष ६८ • अंक १३ • मूल्य ₹ २०

जुलाई ( प्रथम ) २०२५

# पाक्षिक परोपकारी

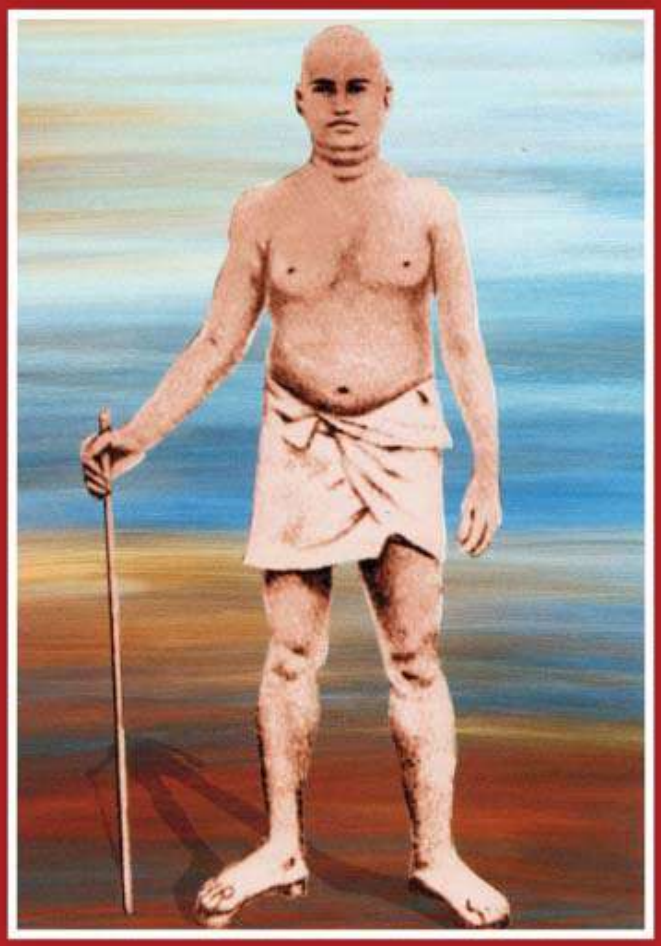

महान् समाज सुधारक, आर्य समाज के संस्थापक

## महर्षि दयानन्द सरस्वती

## इतिहास के हस्ताक्षर

**वैदिक यंत्रालय और सभा के अन्य भवनों के निर्माण के संबंध में शाहपुराधीश को लिखा पत्र।**

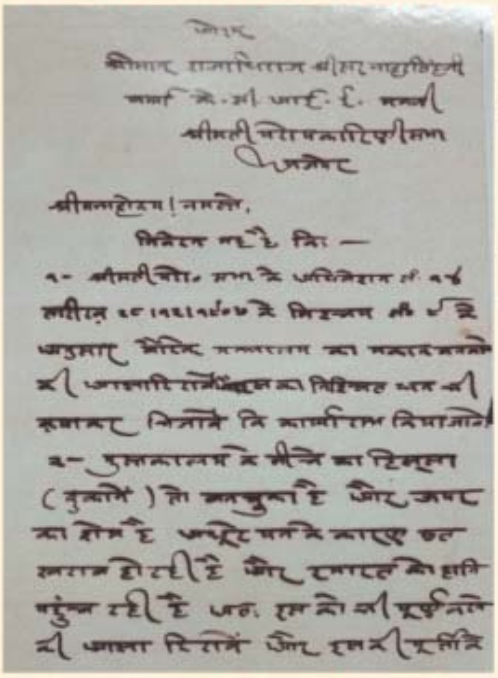

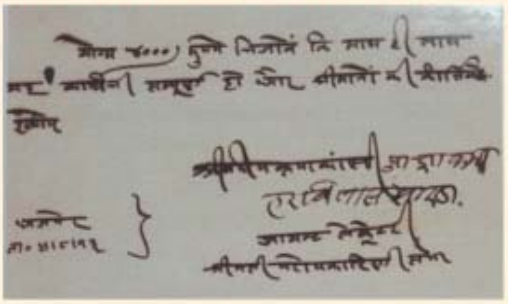

**यह पत्र परोपकारिणी सभा के तत्कालीन संयुक्त मंत्री श्री हरविलास सारडा ने लिखा था।**

ओ३म्

**श्रीमान् राजाधिराज श्री सर नाहरसिंहजी**
**वर्मा के.सी.आई.ई. मन्त्री**
**श्रीमती परोपकारिणी सभा**
**अजमेर**

श्रीमन्महोदय! नमस्ते,

निवेदन यह है कि

१- श्रीमती परो. सभा के अधिवेशन सं. १४ तारीख २८/१२/१९०७ के निश्चय सं. ३ अनुसार वैदिक यन्त्रालय का मकान बनवाने की आज्ञादि देवें इसका निश्चित धन भी कृपाकर भिजावें कि कार्याराम्भ किया जावे।

२- पुस्तकालय के नीचे का हिस्सा (दुकानें) तो बन चुका है और ऊपर का शेष है अधूरेपन के कारण छत खराब हो रही है और इमारत को हानि पहुंच रही है अत: इस को भी पूर्ण करने की आज्ञा दिरावें और इसकी पूर्ति योग्य ४०००) रुपये भिजानें कि साथ ही साथ यह कार्य भी सम्पूर्ण हो और श्रीमानों की कीर्ति बढ़े। इत्योम्

**अजमेर**
**ता. ४/८/१३**

**श्रीमदीयकृपाकांक्षी आज्ञाकारी**
**हरविलास सारडा**
**जायन्ट सेक्रेटरी**
**श्रीमती परोपकारिण सभा**

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,*
*सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।*
*संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,*
*धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।*

**वर्ष : ६७ अंक : १३**

दयानन्दाब्द: २०१

विक्रम संवत् आषाढ़ शुक्ल २०८२

कलि संवत् - ५१२६

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२६

**सम्पादक**

**डॉ. वेदपाल**

**प्रकाशक**- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४
०८८९०३१६९६१

**मुद्रक- डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा**
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
८२०९५८६१६६

**परोपकारी का शुल्क**

**भारत में**

**एक वर्ष**-४०० रु.

**पाँच वर्ष**-१५०० रु.

**आजीवन ( २० वर्ष )** -६००० रु.

**एक प्रति** - २०/- रु.

**वैदिक पुस्तकालय :** ०१४५-२४६०१२०
०७८७८३०३३८२

**ऋषि उद्यान :** ०१४५-२९४८६९८

**RNI. No.** ३९५९ / ५९

# परोपकारी

## जुलाई प्रथम, २०२५

## अनुक्रम


| | | |
|---|---|---|
| ०१. युद्ध का चारित्रिक प्रतियोगी | सम्पादकीय | ०४ |
| ०२. मरणं प्रकृति-शरीरिणाम | डॉ. रामवीर | ०५ |
| ०३. आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य | डॉ. महावीर मीमांसक | ०६ |
| ०४. पुरुष अध्याय - यजुर्वेद ३१-५ | डॉ. धर्मवीर | ०९ |
| ०५. डॉ. रामनाथ वेदालंकार एवं उनकी... | श्री कन्हैयालाल आर्य | १२ |
| * नवीन प्रकाशन पर ५० प्रतिशत की विशेष छूट | | १९ |
| ०६. पानी के बुलबुले को निरन्तर ऊर्जा... | धर्मेन्द्र जिज्ञासु | २० |
| ०७. दिल्ली विश्वविद्यालय मनुस्मृति... | डॉ. सुरेन्द्र कुमार | २३ |
| * साधना, स्वाध्याय, सहयोग के लिए निमन्त्रण | | ३० |
| ०८. निवेदन | | ३१ |
| ०९. शोक सन्देश | | ३१ |
| * परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट | | ३२ |
| * प्रवेश सूचना | | ३२ |
| १०.संस्था की ओर से.... | | ३३ |
| * 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति | | ३४ |


www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

**उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ**
**www.paropkarinisabha.com→gallery→videos**

*'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।*

सम्पादकीय

# युद्ध का चारित्रिक प्रतियोगी

विश्व का इतिहास साक्षी है कि युद्ध में जन-धन की अपूरणीय क्षति होती है, किन्तु कुछ अन्तराल के पश्चात् किसी न किसी बहाने युद्ध होते ही रहते हैं। बीसवीं शती के प्रारम्भ में प्रथम युद्ध के पश्चात् युद्ध की पुनरावृत्ति रोकने के प्रयत्न हुए- संगठन भी बना किन्तु दो दशक पश्चात् ही द्वितीय विश्वयुद्ध हो गया। इसमें एक करोड़ से अधिक व्यक्ति मारे गये। इनके कारणों पर विचार करें, तो प्रभुत्व स्थापन की चाह के अतिरिक्त दूसरा कोई बड़ा कारण नहीं दिखाई देता। उस समय विश्व दो ध्रुव में बँटा दिखाई देता है। किन्तु एक ध्रुवीय व्यवस्था भी शान्ति और समृद्धि की गारन्टी नहीं हो सकती है।

प्रसिद्ध विचारक विलियम जेम्स ने युद्ध का आंशिक समर्थन किया है। जेम्स का मानना है कि अपने नकारात्मक प्रभावों के बावजूद युद्ध-उत्साह, साहस के साथ देश/राष्ट्र भक्ति के भावों में वृद्धि करता है। यदि युद्ध में होने वाली जन-धन हानि को रोकते हुए मानवीय मूल्यों का विकास चाहिये तो युद्ध के चारित्रिक प्रतियोगी धर्म का प्रसार अपेक्षित है। धार्मिक जीवन में नैतिक मूल्यों के साथ व्यक्ति में उत्साह, राष्ट्र के प्रति निष्ठा तथा चारित्रिक उच्चता सम्भव है।

वर्तमान वैश्विक सन्दर्भ के दृष्टिगत यह विचारणीय है कि क्या इस समय प्रचलित धार्मिक विचार का प्रसार युद्धों के रोकने में समर्थ है? अयातुल्ला खुमैनी से पूर्व के ईरान और वर्तमान ईरान के सामाजिक परिदृश्य की तुलना में इसका उत्तर स्पष्ट देखा जा सकता है। उदार एवं सहिष्णु ईरान किस प्रकार एक बन्द समाज में बदल गया? जहाँ स्त्रियां स्वाभिमानपूर्वक जीवन जी रही थीं, वहां उनकी जीवन शैली के बदलावों को देखकर आसानी से समझा जा सकता है।

अफगानिस्तान का उदाहरण भी सामने है। शक्तिशाली सोवियत संघ कई देशों में बंट गया। सबसे ताकतवर टुकड़े रूस ने अपने पड़ौसी (यद्यपि बँटवारे से पूर्व ही उसकी सीमाएं अफगानिस्तान-रूस की सीमाएं एक-दूसरे से मिलती थीं। बंटवारे के बाद वर्तमान रूस दूर हो गया। इसके बाद भी प्रभुत्व बढ़ाने की चाह में) अफगानिस्तान में अपना प्रभुत्व स्थापित कर कठपुतली सरकार चलाने के प्रयत्न किए तो अमेरिका ने वहां के धार्मिक समूहों अथवा धर्म के नाम बने संगठनों को बल प्रदान कर रूस को तो वहां से बाहर जाने को विवश कर दिया, किन्तु कुछ वर्षों के पश्चात् अमेरिका की सेना को अफगानिस्तान से हथियार छोड़कर भागना पड़ा। तालिबान या दूसरे संगठनों के उन्मादपूर्ण धार्मिक व्यवहार से क्या शान्ति की अपेक्षा की जा सकती है। क्या अमेरिकी सेना के हथियार छोड़कर भागने और वहाँ हुए सत्ता संघर्ष में अभिव्यक्त शान्ति-सहिष्णुता और मानवीय गरिमापूर्वक नैतिक मूल्यों का संरक्षण कहीं नाम मात्र को भी दिखाई दिया? उत्तर एक ही है-नहीं।

एक अन्य सन्दर्भ भी दृष्टि में रखने योग्य है- द्वितीय विश्व युद्ध में अमेरिका द्वारा परमाणु बम के प्रयोग और उसके विनाशकारी दुष्प्रभाव से व्यथित एक परमाणु वैज्ञानिक ने चुपचाप अन्यत्र दूसरे देश (ऑस्ट्रेलिया) भागकर अपनी पहचान छुपाकर विवाह कर लिया। उसके पति तथा उसकी सन्तान को भी इस बात की जानकारी नहीं हुई कि वह एक परमाणु वैज्ञानिक है। अनेक वर्ष पश्चात् उसे लगभग अस्सी वर्ष (८० वर्ष) की अवस्था में पकड़ लिया गया और उस पर रूस को परमाणु जानकारी देने का अभियोग चला। उसने साहसपूर्वक स्वीकार किया कि हाँ! उसने ऐसा किया, क्योंकि विश्व शान्ति की उसकी चाह थी। किसी भी एक राष्ट्र या कुछ राष्ट्रों के

ध्रुव बनने/परमाणु शक्ति सम्पन्न होने पर शान्ति की गारन्टी नहीं है। जब दूसरे गुट/ध्रुव के पास भी समान बल होगा, तभी युद्ध से बचा जा सकता है। उसने कहा था कि प्रथम विश्व युद्ध के बीस साल में द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ और रूस के परमाणु शक्ति बनने पर उसके बाद विश्वयुद्ध से बचा जा रहा है। वह किसी सीमा तक सत्य है।

वर्तमान में रूस-यूक्रेन, इसराइल-गाजा, इसराइल-ईरान युद्ध अथवा भारत-पाकिस्तान के मध्य ऑपरेशन सिन्दूर (भारत द्वारा दिए नाम) के बाद भी परमाणु बम सामने वाले के पास होने के कारण यह अप्रत्यक्ष परमाणु सम्पन्न राष्ट्रों के समर्थन के बाद भी विश्वयुद्ध का रूप नहीं ले पा रहे हैं। इसका कारण सामने वाले पक्ष का भी परमाणु शक्ति सम्पन्न होना है।

सैन्य एवं आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न राष्ट्र ही सुरक्षित हैं। धार्मिक मूल्य अर्थात् मानवतावाद की भावना व्यावहारिक दृष्टि से सफल होती दिखाई नहीं दे रही है, क्योंकि **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की भावना को वर्तमान धार्मिक मतपन्थों में अधिमान प्राप्त होना सम्भव नहीं दिखाई देता है।

**अतः युद्ध का चारित्रिक प्रतियोगी तो व्यावहारिक रूप से परमाणु शक्ति से संयुक्त सुदृढ़ सैन्य बल के साथ किसी भी देश (राष्ट्र का) आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होना है। हाँ! राष्ट्र जीवन में नैतिक-मानवीय मूल्यों का स्थापन उसे स्थायित्व देने में बड़ा कारण होना सम्भव है।**

**- डॉ. वेदपाल**

---

सत्यार्थप्रकाश तो एक महान् ग्रन्थ है, दूसरे शब्दों में वैदिक धर्म, मतमतान्तर एवं ज्ञान-विज्ञान का विश्व कोष है।

- पं. युधिष्ठिर मीमांसक

## मरणं प्रकृति-शरीरिणाम्

**डॉ. रामवीर**

प्रतिदिन पल पल सरक रहे हैं
सब मृत्यु की ओर
पता नहीं किसके कितने दिन
बचे हुए हैं और।

वृद्ध जनों ने देख लिए हैं
जीवन के सब दौर
सोच रहे हैं आने वाला
है अब अन्तिम ठौर।

पढ़ते सुनते तो हैं, परन्तु
करते नहीं हैं गौर
आत्मा है अविनाशी मौत न
इसका अन्तिम ठौर।

माना मौत डराती है और
दुःख देती घनघोर
पर सोचो यदि निशा न हो तो
कैसे होगी भोर।

जीवन एक सफर है सबके
अलग-अलग स्टेशन
जिसका स्टेशन आ जाता है
उतर जाता है वह जन।

स्टेशन पर उतर के यात्री
घर ही तो जाता है
घर जाने से क्या घबराना
घर सबको भाता है।

गलतफहमियों के मौसम में
गलत न समझा जाऊं
घर वापसी का मतलब भी
साफ बताता जाऊं।

**'मरणं प्रकृति : शरीरिणाम्'** यह
कालिदास की उक्ति
घर वापसी की ही तो है
संस्कृत में अभिव्यक्ति।

**86, सैक्टर 46, फरीदाबाद (हरियाणा) चल.**
**9911268186**

# आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य-७

– डॉ. महावीर मीमांसक

**गताङ्क से आगे...**

अभी तक हमने अपनी इस लेखमाला में जो लिखा उसमें हमने खुले दिल और दिमाग से यह घोषणा की कि आतकंवाद को मिट्टी में मिलाने के लिये जो अभियान हमारे देश ने चला रखा है हम पूर्ण रूप से दिलोजान से उसके साथ हैं। पी.ओ.के. जो हमारे ही देश का अभिन्न अङ्ग है उसे वापस लेने के लिये जो संघर्ष चल रहा है हम उसके लिये भी प्राणपण से कदम से कदम मिलाकर साथ हैं।

किन्तु इतने मात्र से हमारा मिशन पूरा नहीं होगा। हमारा मिशन ''कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम्'' का है जो इन जिहादी आतकंवादियों के ''गजवाये हिन्द'' की सीधी टक्कर में है, जो इनके ''काफिरवाद'' की अमानवीय संकीर्ण सोच के विरोध में विश्व मात्र को श्रेष्ठ और सच्चा मानव बनाने की भीष्म प्रतिज्ञा है।

यह सोच कितनी घटिया और पाशविक स्तर की है कि इस्लाम के अतिरिक्त धरती पर जितने भी अन्य मनुष्य हैं वे सब काफिर हैं और उन्हें जीने का हक नहीं है। उनको मारकाट कर धरती पर से नेस्तनाबूद, विनष्ट कर देने से ही मुस्लमान को शबाब, पुण्य मिलता है ऐसा करने से ही उसको जन्नत (स्वर्ग) मिलता है जहां भोग विलास पूर्ण जीवन बिताने के लिये ७२ हूरें मिलेंगी, भोग विलास के जो साधन भूमि पर नहीं मिलते वे वहाँ मिलते हैं। ऐसे-ऐसे प्रलोभनों वाले हसीन स्वप्न दिखलाकर मुस्लिम युवकों को इस्लाम के धर्मगुरु, मुल्ला और मोलवीयों द्वारा नवयुवकों का ब्रेन वाश किया जाता है उनके दिमाग को धो-धो कर अच्छे संस्कार निकालकर ये पाशविक संस्कार डाले जाते हैं। यह है इनके धर्मगुरु मौलवी या मुल्लाओं के जीवन का उद्देश्य। जबकि भारतीय सभ्यता के अनुयायियों का, वैदिक संस्कृति को मानने वालों का उद्देश्य मनुष्य को श्रेष्ठ बनाकर उसके ऐहलौकिक और पारलौकिक जीवन को दिव्य और भव्य बनाने का है, आर्य बनाने का है। यह भ्रम सबको अपने दिल और दिमाग से निकाल देना चाहिये कि आर्य भी एक साम्प्रदायिक शब्द है। आर्य की परिभाषा ऋषि दयानन्द ने ''स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश'' में २९वीं संख्या पर दी है, ''आर्य श्रेष्ठ और दस्यु दुष्ट मनुष्य को कहते हैं।'' आर्य की यह परिभाषा प्रत्येक मनुष्य को गांठ बांधकर अपने मन और मस्तिष्क में रख लेनी चाहिये। अतः आर्यों का साम्राज्य का नारा दुष्टता को मिटाकर भूमि पर श्रेष्ठता का साम्राज्य स्थापित करने का नारा है।

क्या इससे किसी का कोई विरोध हो सकता है? ऋषि दयानन्द के भक्तों से भी मैं पूछता हूँ, ''क्या आपको भी यह नारा हवा हवाई लगता है, क्या यह नारा अव्यवहारीय लगता है?'' यदि नहीं तो आर्य ऋषि दयानन्द का अनुयायी भक्त प्रण ले कि हम इस उद्देश्य को प्राप्त करने, पूरा करने के लिये अपने जीवन की बाजी लगायेंगे। इस उद्देश्य की प्राप्ति का नारा हम अपने लेख में आगे विस्तार से बतायेंगे।

आज की प्रमुख समस्या है – १. आतंकवाद २. देश को खण्डित करने वाली आसुरी शक्ति। अतः आतंकवाद को मिट्टी में मिलाकर पूरी तरह विनष्ट करना और देश को खण्डित करने वाली आसुरी शक्तियों को खण्डित करके भस्मासात् कर देना देश का प्रमुख मिशन है, यह हमारी मञ्जिल का प्रथम सोपान (सीढ़ी) है, ऑपरेशन सिन्दूर की प्रगति का बढ़ता हुआ पवित्र कदम है। इस महाअभियान में हम सबको एकजुट अटूट रहना अनिवार्य है। यह दूसरी बात है कि इस महामिलन में

छोटी-मोटी बातों में कुछ मतभेद या मन्तव्य-भेद बना रहे, किन्तु इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता, ऐसे छोटे-मोटे मतभेद या मन्तव्य भेद चाहे वे किसी भी प्रकार के क्यों न हों, हमारी इस एकजुट अटूटता पर तिनका भर भी प्रभाव नहीं डाल सकते, बस हमारे दिल स्फटिकमणि की भान्ति साफ और पारदर्शी बने रहने चाहिये।

अब यह गहराई से समझने और समझाने की बात कि यहाँ ''हम'' और ''हमारे'' से क्या अभिप्रेत है? इस बात को समझने और समझाने के लिये बड़ी गम्भीर और व्यापक व्याख्या की अपेक्षा है। धार्मिक कर्मकाण्ड और पूजा पद्धति का भेद कोई धार्मिक भेद नहीं है यह एक साम्प्रदायिक भेद के रूप में व्याख्यात किया जा सकता है। इतने मात्र भेद से हिन्दु, सिख, बौद्ध, जैन आदि अभारतीय नहीं बनते, सब भारतीय ही रहते हैं। वास्तविक भेद सज्जनता और दुर्जनता का है। यदि कोई अपने तथाकथित धार्मिक क्रियाओं का पालन करते हुये भी आचरण से दुष्ट है तो वह समाज में स्वीकार्य नहीं है। इसीलिये ऋषि दयानन्द ने श्रेष्ठ को आर्य और दुष्ट को दस्यु कहा है। धर्म की परिभाषा में मानवीय मौलिक गुणों को ही गिना जाता है। उदाहरणार्थ -

**धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौजमिन्द्रियनिग्रहः।**
**धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।** मनु.
**शुयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चावधार्यताम्।**
**आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।**

महाभारत

अन्यच्च -

**धारणाद् धर्म इति प्राहुः धर्मो धार्यते प्रजाः।**
**यत्स्याद् धारण संयुक्तं स धर्म इत्युच्यते।।**

१- धैर्य, क्षमा, इन्द्रिय-दमन, चौरी न करना, शुद्धि (शरीर, मन और बुद्धि) इन्द्रियों का दमन (काम, क्रोध आदि का), बुद्धिमत्ता (समझदारी) विद्या (ज्ञान प्राप्ति), सत्य और अक्रोध, हिंसा न करना आदि ये दशधर्म के लक्षण हैं।

२- महाभारत में भीष्म जी कहते हैं - धर्म का सर्वस्व (निष्कर्ष) सुनो, और सुनकर उसे धारण करो (उस पर आचरण करो), जो व्यवहार तुम्हें अपने साथ करना प्रतिकूल लगता है, (तुम्हें नापसन्द है), तुम भी वैसा व्यवहार दूसरों के साथ मत करो, जैसे तुम्हें यह अच्छा नहीं लगता कि कोई तुम्हारे से झूठ बोले तो तुम भी दूसरों के साथ झूठ मत बोलो, यही स्थिति चोरी, धोखा देना, + लूट खसोट करना, हिंसा, क्रोध आदि दुर्गुणों की है। ऐसा न करना धर्म है तथा इसके विपरीत करना अधर्म है।

३- धर्म उन नियमों, सिद्धान्तों या आचरणों को कहते हैं जिन पर चलने से, जिनका पालन करने से व्यक्ति का अपना जीवन, परिवार का जीवन, समाज का जीवन तथा राष्ट्र और विश्व का जीवन सकुशल सुचारु रूप से शान्ति से चलता है। इस प्रकार के जितने भी नियम धारणात्मक रक्षणात्मक हैं वे सब धर्म हैं।

अब सोचिये क्या कोई सामान्य समझदार व्यक्ति भी इन बातों के विपरीत कुछ कह सकता है? उत्तर है, नहीं कोई भी इनका विरोध नहीं कर सकता। धर्म की परिभाषा से समूचा वैदिक साहित्य भरा पड़ा है सब सम्प्रदाय निरपेक्ष है।

इसका सीधा निष्कर्ष यह निकला कि धर्म एक शाश्वत तथ्य है जो सब पर बराबर लागू होता है और सबको मान्य है। जैसे सूर्य का प्रकाश सबके लिये एक ही है, जैसे जल सबके लिये एक ही है जैसे वायु सबके लिये एक ही है, वैसे ही इस विश्व को बनानेवाला भी एक ही है, ऐसा नहीं कि हिन्दुओं के लिये एक ईश्वर है, मुसलमानों के लिये दूसरा, ईसाइयों के लिये तीसरा इत्यादि। अतः धर्म को जो मानवों ने अलग-अलग बाँट रखा है वह धर्म नहीं है वह सम्प्रदाय है। मानव जाति यदि इस शाश्वत तथ्य को समझ ले तो धर्म के नाम पर जो रक्तपात होता है वह एकदम पूरी तरह समाप्त हो जाये। इस प्रसङ्ग में यही अवधेय है कि भारतीय संविधान में जो secu-

lar शब्द है जिसका अनुवाद धर्म निरपेक्ष किया जाता है वह पूर्णत: गलत (अशुद्ध) है, संविधान तो इन उपर्युक्त धर्म के तथ्यों की रक्षा के लिये है, वह इन शाश्वत तथ्यों से निरपेक्ष कैसे हो सकता है? अत: secular शब्द का अनुवाद धर्म निरपेक्ष नहीं, अपितु सम्प्रदाय निरपेक्ष है।

यह तत्त्वज्ञान ऋषि दयानन्द दे सकता है, केवल वेद ही दे सकता है और वेद तथा ऋषि दयानन्द का अनुयायी एक आर्य ही दे सकता है। इसीलिये वेद, ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज सभी धार्मिक अन्धविश्वासों और सामाजिक कुरीतियों का गिन-गिन कर खण्डन और विरोध करता है।

देश के धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र को निष्कंटक बनाने के लिये आर्यसमाज को आर्यों को अभी पर्याप्त समय लगेगा, सो तत्परता से लगाना चाहिये। उसमें आर्यसमाज को शिथिल नहीं पड़ना चाहिये। देश की व आदर्श स्थिति बनाने में आर्यसमाज की प्राथमिकता होनी चाहिये जिस का मापदण्ड वेद में निम्न शब्दों में दिया है-

**समानी प्रपा सह वो अन्नभाग:**
**समानं मन: सह चित्तमेषाम्।**
**समानं मन्त्रमभि मन्त्रये व:**
**समानेन वो हविषा जुहोमि।।**

**तथा -**

**समानी व आकूति समाना हृदयानि व:।**
**समानमस्तु वो मनो यथा व: सु सहास्ति।।**

इन मन्त्रों में समाज और राष्ट्र में सर्वत्र समरसता, साम्मनस्य और सौज्जन्य की बात कही है, ईश्वर ने उपदेश और आदेश दिया है तथा "आ ब्राह्मण ब्रह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्य शूर इषव्योऽतिव्याधि: महारथो जायताम्" इत्यादि राष्ट्रसूक्त में राष्ट्र के सभी वर्ग के नागरिकों, महिलाओं और पुरुषों का चित्र खींचा है, इसे राष्ट्रगान के अनुसार उनका निर्माण करें।

तब तक देश जो आतंकवाद को मिट्टी में मिलाने और देश के खण्डित हुये पी.ओ.के. (बलोचिस्तान, सिन्धप्रदेश, अफगानिस्तान आदि इन प्रदेशों को स्वतन्त्र सत्ता दिलाने में इनकी सहायता करना, यही हमारा अभिप्राय है।) को अपने में मिलाने के लिये संघर्ष कर रहा है, जिसके लिये अभी युद्धविराम हुआ नहीं है, अपितु केवल कुछ समय के लिये स्थगित है, अपने वीर सेनानियों के पूरे समर्थन में खड़ा रहे, जिहाद और काफिर के नाम पर भड़काने वाले, बिलों में चूहों की तरह छिपे हुये शत्रु देश के मुल्ला मौलवियों के ठिकानों को ढूढ़-ढूढ़ कर धवस्त करने के लिये लड़ रहे देश भारत को सब प्रकार से सहयोग देकर सफल बनाने और अपने ही देश वाले भारत में ही रहकर यहीं का खाना खाकर विदेशी शत्रु के गीत गाने और जासूसी करने वालों को कानून के हवाले करने में पूरा सहयोग देकर भारत माता की जय के घोष के गगनचुम्बी आवाज में बुलन्द करें।

यह सबकुछ होने में समय लगेगा, किन्तु होगा अवश्य। यह सब कुछ होने के बाद जब सामान्य स्थिति आये वही समय आर्यो को मैदान में उतरने का सही समय होगा। यहां पुन: यह स्पष्ट कर दूं कि आर्य श्रेष्ठ जन सज्जन को कहते हैं और दुर्जन दुष्ट जन को दस्यू कहते हैं, यह हम पहले लिख चुके हैं।

प्रभु करे वह समय आये, सन् २०७५ में अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश और आर्यसमाज की २००वीं वषगांठ मनाई जाये और तब तक आर्यों का साम्राज्य स्थापित हो जाये और तब गेरुवे ओ३म् के झण्डे के साथ तिरंगे झण्डे के नीचे खण्डे होकर एक स्वर से सभी भारतीय जयघोष करें-

**आर्यों के सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य की जय**

---

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें।-**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२**

# पुरुष अध्याय - यजुर्वेद ३१

**प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर**
**लेखिका - सुयशा आर्या**

**प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी शृंखला में यजुर्वेद-३१ 'पुरुष अध्याय' की व्याख्यानमाला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।**

**-सम्पादक**

हम यजुर्वेद के ३१वें अध्याय के पहले मन्त्र पर विचार कर रहे थे और उस विचार में हमारे सामने दो बातें आयीं कि हम जिस पुरुष की बात कर रहे हैं और हम जिसको जानते हैं यह भ्रम बन सकता है और हम इसको कैसे अलग करें। यहाँ उसे पुरुष कहने की आवश्यकता क्या थी? सीधा परमेश्वर परमात्मा क्यूँ नहीं कहा? पुरुष जैसा कोई सन्देह वाला शब्द क्यूँ प्रयोग किया? तो बात समझ में यह आती है कि हमारे अन्दर कुछ बातें और उसके अन्दर कुछ बातें समान हैं और कुछ बातें भिन्न है। उसकी और हमारी बातें कुछ अलग-अलग विशेषतायें लिए हुए है इसलिए वो हमसे भिन्न है या हम उससे भिन्न हैं। हम दोनों कुछ एक जैसी बातों को धारण करते हैं, इसलिए हमारा नाम, हमारी संज्ञा भी एक जैसी है। तो जैसे 'पुरुष' है तो पुरुष संज्ञा मनुष्य की भी है, वैसे ही पुरुष संज्ञा ईश्वर की भी है। इसके लिए योगदर्शन का एक सूत्र है जहाँ ईश्वर के लिए पुरुष शब्द का प्रयोग किया है- **क्लेश कर्म विपाक आशयैर परामृष्टः पुरुष विशेषः ईश्वरः**। यहाँ बाकि सब बातों को बताते हुए एक शब्द डाला 'पुरुष विशेषः'। अर्थात् पुरुष तो बहुत हो सकते हैं, लेकिन कुछ विशेषता लिए हुए जो है, वो एक है। इसलिए हम सब सामान्य पुरुष है और वह पुरुष विशेष है और इसी तरह से हम सब जीवात्मा हैं, वह परमात्मा है। हम पुरुष है, वह परम पुरुष है। हम ईश्वर है, वह परमेश्वर है। तो यह सारे शब्द हमारे साथ ईश्वर की समानता और हमारे साथ ईश्वर की भिन्नता को बताते हैं। इस समानता और विशेषता को समझने के बाद इस मन्त्र के अर्थ का विचार करना कठिन नहीं है। तो जब हम इस मन्त्र का अर्थ देखेंगे तो यहाँ पुरुष अर्थ परम पुरुष से है, परमात्मा से है, परमेश्वर से है और यहाँ जो सहस्र शब्द है, इस पर भी यदि विचार कर लें तो एक छोटी-सी बात है, सहस्र कहते हैं, हजार को। तो हम समझ लेते हैं कि गिनती है, संख्या है और उस पुरुष की हजार आँख मान लेते हैं हजार पैर मान लेते हैं, हजार सिर मान लेते हैं। लेकिन यह संख्या ही होती तो इसका अनुपात गड़बड़ हो जाता इसलिए इस शब्द को जब हम भाषा में प्रयोग करते हैं तो हजार आँखों वाला या हजारों आँख वाला - तो हमारा बहुवचन का जो प्रयोग है वह संख्या में न होकर आँख में हो सकता है, आँख में न होकर संख्या में हो सकता है। तो 'सहस्राक्षः' यहाँ सहस्र अर्थात् जिसकी हजार आँखें है ऐसा। तो यहाँ आँख से आँख का गोलक अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि आँख का गोलक अभिप्रेत होता तो हमारे आँख और पैर में जो दूरी है उसका अनुपात वहाँ नहीं घटेगा, क्योंकि वह सर्वतः स्पृत्वा, इस भूमि को सब ओर से स्पर्श किया हुआ है, सब ओर से व्याप्त है। वह इसके अन्दर भी है और उसके बाहर भी है। तो जैसे हमारे शरीर का सामर्थ्य सिर में और पैर में अलग-अलग है, तो जहाँ पर सिर होगा वहाँ पैर नहीं होगा और जहाँ पैर होगा, वहाँ सिर नहीं होगा। तो हमारे गमन सामर्थ्य से, हमारे ज्ञान सामर्थ्य में दूरी दिखाई देती है तो यह दूरी जो है उसको दूर कौन करेगा, कैसे करेगा? तो हमारा अत्मा कभी सिर में है और कभी पैर में है। कभी

सिर में काम करता है, कभी पैर में काम करता है। कभी आँख से काम करता है, कभी कान से काम करता है। यहाँ अक्ष: और पात् दो का ही प्रयोग हुआ है और यह दोनों उपलक्षण हैं। उपलक्षण का अर्थ है, बहुतों में से एक को बता देना ताकि बाकि सब का ज्ञान हो जाए, बोध हो जाए, सबका ग्रहण हो जाए। तो सहस्राक्ष: में आँख उपलक्षण है समस्त ज्ञानेन्द्रियाँ का। मतलब उसे केवल दिखता है ऐसा नहीं। वह सुनता भी है, सब स्पर्श भी करता है, सब जानता भी है, सब उसे पता है। अर्थात् जितना ज्ञान, जितने प्रकार का सम्भव है वो सब उसको मालूम है। तो हमारी समस्त ज्ञानेन्द्रियाँ मिलकर जितना ज्ञान प्राप्त करती हैं वो उसके पास है और जितना हमारा कर्म है, जितनी हमारी गति है जितना हमारा गमन सामर्थ्य है, जितनी दूरी को हम प्राप्त कर सकते हैं, वह भी उसके लिए सामान्य है। वो समस्त, सब स्थानों पर गया हुआ है इसलिए उसे अतिरिक्त पैर की आवश्यकता नहीं होती है। तो उसके पास कर्म करने का सामर्थ्य, उसके पास ज्ञान का सामर्थ्य, दोनों के दोनों भली प्रकार से हैं। तो यह ज्ञान और कर्म का जो सामर्थ्य है उस सामर्थ्य को बताने के लिए यहाँ सहस्र शब्द का प्रयोग हो रहा है और यहाँ सहस्र शब्द हजार के स्थान पर हजारों। जैसे हम कहते हैं- वहाँ कितने लोग थे? हजारों। अर्थात् एक हजार भी हो सकते हैं, दस हजार भी हो सकते हैं, नब्बे हजार भी हो सकते हैं 99 हजार भी हो सकते हैं। वहाँ हजार कहने का जो अभिप्राय है, वो उसकी असंख्यता, बहुतायत को बताना है। इस तरह से यहाँ पर यह बताया गया कि उसका जो सामर्थ्य है वो ज्ञानेन्द्रियों का जो सामर्थ्य है वो भी उसके पास हजारों गुना है। अर्थात् हमारी अपेक्षा से बहुत अधिक है और उसके पास जो कर्म सामर्थ्य है, गमन सामर्थ्य है, गति है वह भी हमसे बहुत अधिक है। जब हम जाते हैं तो वह जा चुका होता है अर्थात् वो वहाँ पर पहले से प्राप्त है और वह सभी स्थानों पर प्राप्त है, इसलिए सभी स्थानों पर प्राप्त होने से वो सब जगह गया हुआ है। कभी-कभी हमें लगता है कि पैर के बिना जाना कैसे हो सकता है? लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि पैर को जो प्रयोजन है वो पहुँचना है और यदि पहले से पहुँचा हुआ है तो पैर का प्रयोग सिद्ध होने से पैर वाला है। ज्ञान का प्रयोजन सिद्ध होने से सिर वाला है। आँखों का प्रयोजन सिद्ध होने से आँख वाला है। तो वैसे ही यह जो परमेश्वर है, परमात्मा है उसका जो सामर्थ्य है वह समस्त रूप से यहाँ वर्णित किया गया है। यहाँ उसको पुरुष: कहा, यहाँ उसको आँखों वाला कहा, यहाँ उसको पैरों वाला कहा, यहाँ उसको सिर वाला कहा। तो हमारा जो इन इन्द्रियों से, इन अवयवों से हमारे अन्दर जो काम हो रहा है, वह उसके अन्दर होता है, यह बताना इसका उद्देश्य है। अब इसमें एक रोचक तथ्य है जो ध्यान में आना चाहिए- हमारी जो आँख है उसके सामने जितनी चीज आती है उतना हमें ज्ञान होता है। हमारा जो कान है उसके अन्दर जितना शब्द समा सकता है, उतना ज्ञान हो सकता है। हमारे पैर जहाँ तक लाँघ सकते हैं वहाँ तक हमारी गति होती है, तो उसकी कितनी होगी जितनी बड़े उसके पैर होंगे। जितना बड़ा ज्ञान होगा, तो जितना वह स्वयं है उतना होगा, क्योंकि वह सर्वतो स्पृत्वा, उससे कुछ भी छिपा हुआ नहीं है, कुछ भी बचा हुआ नहीं है। उससे कुछ भी दूर नहीं है। जो कुछ है, वह सब उसके अन्दर बाहर सिमटा हुआ है तो उसके सारे सामर्थ्य सब जगह पर हैं। इसलिए उसके देखने, सुनने, बोलने, करने के लिए अतिरिक्त साधनों की आवश्यकता नहीं होती। मनुष्य के पास यह जो वस्तुएँ हैं जिनको हम हाथ-पैर, आँख-नाक कहते हैं। हमें लगता है कि यह बहुत बड़ी चीज है, लेकिन यह बड़प्पन को नहीं बल्कि हमारी दुर्बलता को, कमी को बता रहे हैं। अर्थात् जहाँ हम स्वयं नहीं देख सकते, आत्मा से जिसे नहीं देख सकते, हम उसे आँख से देखने का यत्न करते हैं। हम आत्मा से जहाँ नहीं जा सकते, वहाँ आत्मा को पैरों से ले जाते हैं। हम जिन चीजों का आत्मा से नहीं सुन सकते, कानों से उन शब्दों को आत्मा तक पहुँचाते हैं। तो आँख, नाक, कान आदि

इन्द्रियाँ जो हैं वह हमारे साधन हैं और साधनों की आवश्यकता जब हमारे पास सामर्थ्य की न्यूनता होती है, हमारी पहुँच की कमी होती है, जब हमें इनकी आवश्यकता पड़ती है। जहाँ हमारा आत्मा नहीं पहुँचा वहाँ हम हाथ को पहुँचाने का यत्न करते हैं और हाथ भी नहीं पहुँचता तो हाथ में और कुछ उपकरण ले कर के उसको काम में लेते हैं तो इस तरह से यह जो साधन हैं, जिन्हें हम अपनी विशेषता समझते हैं, अपनी सम्पत्ति समझते हैं, अपने बड़प्पन का कारण मानते हैं और हम इनसे तुलना करके ईश्वर को इनके बिना मान कर उसे अपने से दुर्बल मानते हैं कि वह बिना हाथ वाला, बिना पैर वाला बिना आँख वाला कैसा लगेगा? यदि हमें यह बात पता हो जाए, यह विचार हम कर लें कि यह साधन हमारी अपूर्णता को पूर्ण करने में सहायक हो रहे हैं, यह साधन हमें बड़ा बना रहे हैं। लेकिन जिसको साधनों की आवश्यकता ही न हो, उसके लिए साधन उसे बड़ा कैसे बनायेंगे? हमारे पास सम्पत्ति हमको बड़ा बनाती है, क्योंकि हम सम्पत्ति की अपेक्षा रखते हैं और जो-जो अपेक्षा रखने वाले हैं, उनमें जितनी-जितनी अधिक सम्पत्ति होती है वह उतना ही बड़ा-बड़ा होता जाता है। लेकिन यदि किस को अपेक्षा ही न हो, आवश्यकता न हो तो उसको बड़प्पन का आधार कैसे बनाया जा सकता है? तो वैसे ही परमेश्वर को ज्ञान के लिए, परमेश्वर को कर्म के लिए, जाने या पहुँचने के लिए, जिन साधनों की आवश्कता हमें पड़ती है, यदि वही पड़े तो वह कम होगा, वह पहुँचा हुआ नहीं होगा तो उसे साधन चाहिए। लेकिन जब वह गया हुआ है तो उसे पैर लेकर क्या करना है। जब वह वहाँ विद्यमान है तो उसे आँख का क्या करना है जब वह बुद्धि से वहाँ विद्यमान है तो उसे सिर का, मस्तिष्क का उसे क्या करना है। तो यह सब बातें उसके लिए व्यर्थ हो जाती हैं, क्योंकि इनका सामर्थ्य उनमें विशेष रूप से विद्यमान होता है। तो उस सामर्थ्य को इस मन्त्र में समझाया गया है और इतना ही नहीं, वह इस सामर्थ्य से, जिन स्थानों पर हम इस सामर्थ्य का उपयोग कर रहे हैं, वह इन स्थानों पर स्वयं तो है ही, किन्तु वह इन स्थानों से परे भी विद्यमान है अर्थात्, यहाँ मन्त्र में जो शब्द आया है 'दशाङ्गुलम्:।' हमारा ध्यान जाता है कि अंगुल उँगलियों को कहते हैं और दश, दस गिनती को कहतें हैं, तो हम समझते हैं कि उसकी दस की गिनती है कि वह दस अंगुल और भी परे है। किन्तु यहाँ अंगुल का अभिप्राय अवयव है जिनसे हम काम करते हैं ता यह संसार जिन अवयवों से बना है, जो बातें इस संसार को बना रही हैं वो इसके अवयव हैं। जैसे हमारा हाथ जिस चीज को बनाता है, तो हाथ की उँगलियाँ उसको बनाने के काम आ रही हैं, तो वह उँगलियाँ उसे बनाने का हमारा अवयव हैं वैसे ही, यह संसार जिन चीजों से बन रहा है, तो बनने के जो साधन या उपकरण हैं वो भूत, महाभूत, सूक्ष्मभूत कहते हैं, वो हैं जो सूक्ष्मभूत महाभूत अवयव हैं, उनसे भी वह परे है। अर्थात् अवयवों का जो सामर्थ्य है, वो भी उसके अन्दर विद्यमान है। तो इस दृष्टि से जब हम विचार करते हैं तो यहां वो समस्त ज्ञान-कर्म के साथ-साथ जो वस्तु है, स्थान है उन पर भी वो अधिष्ठाता के रूप में है, उनसे भी परे है। उनसे भी ऊँचा है। इस शब्द को हम उपनिषद् की एक पंक्ति से समझ सकते हैं- **न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत् समश्चाप्यधिकः स्वाभाविकि ज्ञान-बल-क्रिया च।** अर्थात् वो परमेश्वर है, उसके अन्दर ज्ञान-बल-क्रिया वो स्वाभाविक है। उसका कोई कारण नहीं है जिससे वो बना हो। न वो किसी का कार्य है, न उसका कोई कारण है। उसके समान कोई दूसरी सत्ता भी नहीं है। उस जैसा भी नहीं है और उससे बड़ा होने का प्रश्न भी पैदा नहीं होता। लेकिन उसका जो सामर्थ्य है वो जितना सामर्थ्य हम लोगों को संसार में दिखाई दे रहा है और हम यह मसझ रहे हैं कि मनुष्यों के पास बहुत सामर्थ्य है, तो वह समस्त सामर्थ्य उसके अन्दर है, समस्त सामर्थ्यों का जो स्रोत है, समस्त सामर्थ्यों का जो अधिष्ठाता है, वो वह है। तो मन्त्र में दशाऽगुलम् कहा यहाँ उसे 'परास्य शक्तिः विविधैव श्रूयते' कहा। यदि इन शब्दों पर हम विचार करेंगे तो हमें ईश्वर के स्वरूप को समझने में बहुत सहायता मिलेगी।

०७ जुलाई पर विशेष

# डॉ. रामनाथ वेदालंकार एवं उनकी साहित्य साधना

**- श्री कन्हैयालाल आर्य**

डॉ. रामनाथ वेदालंकार वैदिक साहित्य के ख्याति प्राप्त मर्मज्ञ विद्वान् थे। सौम्यमूर्ति, सामवेद भाष्यकर्त्ता विद्यामार्तण्ड आचार्य रामनाथ का जन्म उत्तर प्रदेश के बरेली जनपद के फरीदपुर ग्राम में ७ जुलाई १९१४ को हुआ था। आपके पूज्य पिता लाला गोपालराय महाशय जी के नाम से विख्यात थे। आप एक स्वतन्त्रता सेनानी थे। आपकी पूज्या माता श्री का नाम श्रीमती भगवती देवी था।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आर्यसमाज द्वारा स्थापित पाठशाला में हुई। आपने दो वर्ष काशी में भी अध्ययन किया आपने १९३६ में गुरुकुल कांगड़ी से वेदालंकार की उपाधि प्राप्त की। इस संस्था में ३८ वर्ष वेद-वेदाङ्ग, दर्शन शास्त्र, काव्य शास्त्र, संस्कृत साहित्य आदि विषयों के शिक्षक एवं संस्कृत विभागाध्यक्ष रहते हुए समय-समय पर आप कुलसचिव (प्रस्तोता या रजिस्ट्रार) तथा आचार्य एवं उपकुलपति का कार्य भी करते रहे। इस संस्था ने आपको 'विद्यामार्तण्ड' की मानद उपाधि से भी सम्मानित किया। आपने आगरा विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. तथा पीएच.डी. परीक्षायें उत्तीर्ण की हैं। आपका पीएच.डी. का शोध प्रबन्ध था 'वेदो की वर्णन शैलियाँ'।

आप १९७६ में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार से सेवा-निवृत्त होकर तीन वर्ष के लिए पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ में 'महर्षि दयानन्द वैदिक अनुसन्धान पीठ' के प्रथम आचार्य एवं अध्यक्ष नियुक्त हुए। वहाँ से आपके तीन ग्रन्थ प्रकाशित हुए- वेदभाष्यकारों की वेदार्थ प्रक्रियाएँ, महर्षि दयानन्द की शिक्षा, राजनीति और कला कौशल सम्बन्धी विचार, वैदिक शब्दार्थ विचार। आप द्वारा लिखित अन्य ग्रन्थ हैं - वेद मञ्जरी, ३६५ वेदमन्त्रों की भावभीनी प्रवाहमयी व्याख्या, वैदिक नारी, वैदिक मधुवृष्टि, आर्ष ज्योति, ऋग्वेद ज्योति तथा सामवेद का संस्कृत एवं हिन्दी में प्रौढ़ भाष्य, ऋषि दयानन्द निर्दिष्ट आध्यात्मिक प्रक्रिया का अनुसारण करते यह भाष्य लिखा गया है। आपकी अन्य प्रकाशित पुस्तकें हैं - वैदिक वीर गर्जना (२०० वीर रस पूर्ण वेदमन्त्रों पर आश्रित उद्बोधक उदात्त रचना) वैदिक सूक्तियाँ (अथर्ववेद की १००० वैदिक सूक्तियों का अर्थ सहित संग्रह), यज्ञ मीमांसा (अग्निहोत्र दर्पण), वैदिक प्रार्थना पुष्पांजलि (वैदिक निबन्ध) वैदिक नारी (वेद में नारी का स्वरूप)।

आपकी आरम्भ से ही अध्यापन के साथ-साथ लेखन में भी विशेष अभिरुचि रही है। अपने वैदिक वाङ्मय के गम्भीर अध्ययन विस्तृत अनुशीलन, निष्पक्ष एवं स्वतन्त्र चिन्तन के आधार पर अनेक उच्चकोटि के शोधपूर्ण ग्रन्थों का प्रणयन किया है-

१. आपकी प्रथम कृति **'वैदिक वीर गर्जना'** है जिसमें वीरता के तरंगों से तरंगित करने वाले वेदमन्त्रों का अर्थ सहित संकलन किया गया है। इस पुस्तक की रचना एवं संकलन १९४६ में उस समय किया गया था जब देश में स्वतन्त्रता आन्दोलन अपनी पूरी तीव्रता में था। इस पुस्तक को पाठकों द्वारा इतना पसन्द किया गया कि इसके दो संस्करण प्रकाशित हुए।

वेदों में युद्ध सम्बन्धी अनेक रोमांचकारी वर्णन मिलते हैं, किन्तु इस पुस्तक का उद्देश्य वैदिक युद्ध-विद्या को दर्शाना नहीं है। इसमें उन केवल वीरोचित मन्त्रों को स्थान दिया गया है जो जन साधारण के मनों में वीरता के भाव भरने वाले हैं। ये गीत विजय के गीत हैं, जागृति देने वाले हैं, प्रसुप्त मनों में स्फुर्ति लाने वाले हैं। हृदय में वीरता की तरंग उठाने वाले हैं। इन्हीं गीतों का गान करते

हुए प्राचीन आर्य दिग्विजयी होते रहे हैं। जैसे नदी का प्रवाह तटों को चीरता हुआ, बाँधों को तोड़ता हुआ, चट्टानों को लांघता हुआ आगे बढ़ता जाता है, वैसे ही मनुष्य को सब विघ्नों को परास्त करते हुए जीवन-संग्राम को आगे ही आगे बढ़ाना है। इसके लिए मन में प्रबल वीर भावना की आवश्यकता है। उसी वीर भावना को जागृत करने के उद्देश्य से यह संग्रह तैयार किया गया है।

इस पुस्तक में तीन रचनायें हैं - 'वीर भावना', 'उद्बोधन' और 'वीरता की तरंग में'। इनमें से प्रथम रचना लाहौर में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर वेद सम्मेलन में पढ़ी गई थी। तत्पश्चात् दो रचनाएँ और लिखकर पुस्तक का रूप दिया गया। यह लेखक का प्रथम प्रयास था। इसमें 'वीर भावना' में कुल ७४ मन्त्र लिये हैं जिनमें ऋग्वेद के १७, यजुर्वेद के ७ और अथर्ववेद के ५० मन्त्र लिये गये हैं, परन्तु मन्त्र क्रमांक ४३ के पाचवें काण्ड के १०वें सूक्त के ७ मन्त्रांश तथा क्रमांक ४४ के दसवें काण्ड के ५वें सूक्त के २५ से २८ तक ४ मन्त्रांश लिये गये हैं। 'उद्बोधन' में ऋग्वेद के ४३ मन्त्र, यजुर्वेद के ६ मन्त्र यजुर्वेद के ७ मन्त्र तथा अथर्ववेद के ५ मन्त्र लिये गये हैं।

२. आपकी दूसरी कृति ''वैदिक सूक्तियाँ'' प्रकाशित हुई जिसमें अथर्ववेद से विविध विषयों पर चुनी गई एक सहस्र सूक्तियाँ अर्थ सहित दी गई हैं।

३. वेदों की वर्णन शैलियाँ - लेखक जब पीएच.डी. कर रहा था तब उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से १९६६ में इस विषय पर पीएच.डी. की डिग्री मिली थी।

जब हम सायण आदि के भाष्यों को पढ़ते हैं, तब वैदिक शब्दों का अर्थ तो हमें विदित होता है, किन्तु उनके पीछे क्या भावना है, इससे हम पर्याप्त अंशों में अपरिचित रहते हैं। हमारे सामने अनेक समस्यायें उपस्थित हो जाती है और समाधान की अपेक्षा करती है। अथवा हम यह समझने लगते हैं कि वेदों में कोई विशेषता नहीं है, उनमें केवल स्तुति, प्रार्थना, यज्ञ तथा कुछ निरर्थक आख्यान मात्र हैं। परन्तु जब हम वेदों की शैलियों से परिचित हो जाते हैं, तब हमारे लिए स्तुति, प्रार्थना में कोरी स्तुति प्रार्थनाएँ नहीं रहती, आख्यान कोरे आख्यान नहीं रहते, संवाद कोरे संवाद नहीं रहते, अपितु उनके पीछे रहस्यार्थों के दर्शन होने लगते हैं। इसी विचार से प्रस्तुत प्रबन्ध में वेदों की शैलियों को शोध के विषय के रूप में गृहीत किया गया।

इस ग्रन्थ को आठ अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है प्रथम अध्याय में शैली विचार के अन्तर्गत वेदों का गौरव, वेदों के शैली- विचार का महत्त्व, शतपथ ब्राह्मण में शैली निर्देश, यास्क का शैली विचार, शौनक का शैली विचार, इतर साहित्य में शैली विचार वेदों की अनेकार्थक शैली तथा अध्ययन की दिशा और सीमाओं का वर्णन किया गया है। द्वितीय अध्याय में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद की प्रहेलिक शैली का वर्णन किया गया है तथा प्रहेलिक शैली के विचार के महत्त्व को दर्शाया गया है। तृतीय अध्याय में आत्मकथात्मक शैली को प्रस्तुत किया गया है। चतुर्थ अध्याय में संवादात्मक शैली का दिग्दर्शन कराया गया है। पंचम अध्याय में चारों वेद के प्रश्नोत्तर को दिखलाया गया है। छठे अध्याय में प्रेरणात्मक (विद्यात्मक रूप, निषेधात्मक रूप) शैली, आश्वासनात्मक शेली एवं आशीर्वादत्मक शैली को प्रस्तुत किया गया है। सातवें अध्याय में अर्थवादात्मक (प्रशंसात्मक अर्थवाद, निन्दात्मक अर्थवाद में अभिशात्मक शैली एव भर्त्सनात्मक शैली) को बताया गया है। आठवें अध्याय में स्तुत्यात्मक प्रत्यक्षकृत स्तुति, परोक्षकृत स्तुति, कतिपय दान स्तुतियाँ, प्रार्थनात्मक शैली तथा आशंसात्मक शैली प्रस्तुत की गई है। लेखक ने इसके माध्यम से वेदों पर कटु आक्षेप किये जाने के विपक्षी प्रयास का समाधान प्रस्तुत किया है।

४. वेद भाष्यकारों की वेदार्थ प्रक्रियाएँ - वेदार्थ प्रक्रियाओं विषय वेद-व्याख्या की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। वेदों के सम्बन्ध में एक शंका प्रायः यह

उठायी जाती है कि एक ही मन्त्र का कोई व्याख्याता एक अर्थ करता है तो अन्य व्याख्याता उसका उससे भिन्न कोई पृथक् ही अर्थ उपस्थित करते हैं। ऐसी अनिश्चितता क्यों है? यदि वेद मन्त्र एक सार्थक रचना है तो विद्वानों को उसका एक समान ही अर्थ करना चाहिये, जैसे लौकिक संस्कृत के किसी श्लोक का सभी संस्कृतज्ञ समान अर्थ करते हैं, परन्तु वेद मन्त्रों के अर्थों में ऐसी निश्चयात्मकता नहीं है। उदाहरणार्थ निम्न मन्त्र को ही ले सकते हैं –

**विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।**
**यद् भद्रं तन्नआसुव।।**

(ऋग्वेद ५/८२/५, यजुर्वेद ३०/३)

इस मन्त्र का सामान्य अर्थ यह है कि – हे सविता देव! तुम हमारे समस्त दुरितों को दूर कर दो और जो भद्र हैं, वह हमें प्रदान करो। यहाँ 'सविता देव' से कोई भौतिक सूर्य को ग्रहण करता है, कोई परमात्मा को, कोई जीवात्मा को, कोई मन को, कोई प्राण को, कोई राजा को और कोई विद्वान्, आचार्य आदि को। किसी कोष में स्पष्टत: यह नहीं लिखा कि सविता के ये सब वाच्यार्थ होते हैं। यदि इस मन्त्र को श्लेष से बहु-अर्थक माना जाये, तो सभी वेदज्ञों के इस मन्त्र के ये सब अर्थ करने चाहियें, जैसे लौकिक संस्कृत के श्लोकों के किए जाते हैं। किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता। इस शंका का उत्तर विभिन्न वेदार्थ-प्रक्रियाओं का परिचय हो जाने पर स्वत: मिल जाता है। वेदार्थ प्रक्रियाओं के परिचय से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वेदमन्त्रों के जो अग्नि, मित्र, वरुण, सूर्य, सविता आदि देवता हैं उनके कैसे विभिन्न अर्थ हो सकते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य वेदार्थ-प्रक्रियाओं का प्रामाणिक विववरण प्रस्तुत कर 'वेदार्थ-प्रक्रियाओं की दृष्टि से महर्षि दयानन्द की वेदार्थ को क्या देन है? यह प्रदर्शित करना है।' इसमें चार अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में वेदार्थ की विभिन्न प्रक्रियाओं का विस्तृत परिचय दिया गया है। द्वितीय अध्याय में प्रमाणपूर्वक यह दर्शाया गया है कि ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, निरुक्त, नैरुक्त आचार्य तथा विभिन्न भाष्यकार न्यूनाधिक रूप में वेदमन्त्रों की एकाधिक प्रक्रियाओं में व्याख्यायें करते रहे हैं। तृतीय और चतुर्थ अध्याय विशेषता: स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य से सम्बन्ध रखते हैं। तृतीय अध्याय में वेदमन्त्र तथा उनका आंशिक अथवा सम्पूर्ण स्वामिभाष्य उद्धृत करते हुए यह निरूपित किया गया है कि इतर पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा स्वीकृत विविध वेदार्थ प्रक्रियाओं का अनुसरण करने वाली वेद-व्याख्यायें स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य में प्रचुर रूप में उपलब्ध होती हैं। चतुर्थ अध्याय में स्वामिभाष्य के वे प्रसंग एवं श्लेषादि द्वारा एक मन्त्र के एकाधिक अर्थ प्रदर्शित किये हैं। महर्षि दयानन्द के ऋग्वेद तथा यजुर्वेद के भाष्यों में जहाँ श्लेषालंकार मानकर मन्त्रों के एकाधिक अर्थ किये गये हैं, उन सब स्थलों की एक सूची भी परिशिष्ट में दे दी गई है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि श्लेषालंकार का प्रयोग महर्षि ने कितने व्यापक रूप में किया है तथा वेदमन्त्रों की पारमार्थिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार की व्याख्याओं को करते हुए वेदों की अनेकार्थकता को वे कितना महत्त्व देते हैं। स्वामी दयानन्द की वेदभाष्य शैली की अनेक विशेषतायें हैं, जिनमें से प्रस्तुत पुस्तक मुख्यत: उनकी अनेकार्थक शैली पर तथा प्रसंगत: कतिपय अन्य विशेषताओं पर भी प्रकाश डालती है।

प्रस्तुत पुस्तक पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ के ''महर्षि दयानन्द वैदिक अनुसन्धान पीठ'' की अनुसंधान योजना के अन्तर्गत लेखक द्वारा इस पीठ से प्रोफेसर एवं अध्यक्ष के पद पर कार्य करते हुए लिखी गई है और १९८० में प्रकाशित हुई थी।

**(५) दयानन्द विचार कोश**– महर्षि दयानन्द के शिक्षा, राजनीति और कला-कौशल सम्बन्धी विचार इस ग्रन्थ का प्रति पाद्य विषय है। यह शोधपूर्ण कृति वैदिक साहित्य का अमूल्य रत्न है। इस का प्रकाशन १९८२ में

श्रद्धानन्द शोध प्रतिष्ठान गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार से किया गया है।

**( ६ ) वैदिक शब्दार्थ विचार**- यह एक अनुपम ग्रन्थ है जिसमें यह स्पष्ट किया गया है कि सामान्यतया एक ही अर्थ में प्रयुक्त होने वाले 'अज', 'असुर', 'वृषभ' आदि शब्द वेदों में भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। इसका प्रकाशन विक्रमी सम्वत् २०३८ तदनुसार सन् १८८१ में महर्षि दयानन्द अनुसन्धान पीठ चण्डीगढ़ के तत्त्वावधान में विश्वेश्वरानन्द विश्वबन्धु संस्कृत भारती शोध संस्थान होशियारपुर से हुआ।

**( ७ ) वैदिक प्रार्थना पुष्पाञ्जलि**- इस पुस्तक का प्रकाशन १९८० में किया गया। यह लेखक के विविध वैदिक विषयों पर १५ प्रेरक निबन्धों का संग्रह है।

**( ८ ) यज्ञ मीमांसा** - जैसे हम भौतिक अग्नि में हव्य की आहुति देकर अग्निहोत्र करते हैं, वैसे अन्य क्षेत्रों में भी अग्निहोत्र हो रहा है। परमात्मा-रूप अग्नि में जीवात्मा, प्राण, मन, बुद्धि एवं इन्द्रियों को समर्पित करनपा आत्मिक अग्निहोत्र कहलाता है। बाह्य अग्निहोत्र के साथ-साथ अग्निहोत्री को यह आत्मिक अग्निहोत्र भी करना होता है, तभी अग्निहोत्र की पूर्णता होती है। अधिदैवत में भी अग्निहोत्र हो रहा है। छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार पृथिवी अग्नि है, संवत्सर उसकी समिधा है, आकाश धुँआ है, रात्रि ज्वाला है, दिशाएँ अंगारे हैं, अवान्तर दिशाएँ, चिनगारियाँ हैं। उस पृथिवी रूप अग्नि में वर्षा जल की आहुति पड़ती है। मनुष्य के शरीर में प्राणाग्निहोत्र हो रहा है। पुरुष ही अग्नि है, वाणी उसकी समिधा है, प्राण धुँआ है, जिह्वा ज्वाला है, चक्षु अंगारे हैं, श्रोत्र चिनगारियाँ है। इस अग्नि में अन्न की आहुति पड़ती है। उससे रेतस रूप फल उत्पन्न होता है।

अग्निहोत्र के लाभों की सूची अनन्त है। वायु शुद्धि, आरोग्य, दीर्घायुष्य, वर्षा, दूध, अन्न, धन, बल, ऐश्वर्य, सन्तान, पुष्टि, निष्पापता, सच्चरित्रता, जागृति, शत्रुविनाश, आत्मरक्षा, यश, तेजस्विता, आनन्द, मोक्ष आदि की प्राप्ति अग्निहोत्र से बताई गई है। इनमें से कुछ लाभ साक्षात् सुगन्धि, पुष्टि, मिष्ट, रोगनाशक हव्यों की आहुति से प्राप्त होते हैं। कुछ परमात्माग्नि एवं यज्ञाग्नि के गुणों का चिन्तन करने तथा इसके द्वारा प्रेरणा प्राप्त करने से होते हैं।

लेखक ने प्रस्तुत ग्रन्थ में या तो वेदादि शास्त्रों की बात कही है, या जननायक दयानन्द सरस्वती स्वामी की। ग्रन्थ को सात अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है जो इस प्रकार हैं- **प्रथम अध्याय** में यज्ञ और अग्निहोत्र के विषय में सामान्य विचार प्रकट किये गये हैं। इसमें वेद एवं ब्राह्मणग्रन्थ आदि के आधार पर तथा स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों के आधार पर अग्निहोत्र के स्वरूप, काल, समिधा, हव्य, यज्ञकुण्ड परिमाण, यज्ञपात्र आदि का सब विधान वर्णित करते हुए स्वामी दयानन्द की ही भाषा में यज्ञ के लाभों का विशुद्ध प्रतिपादन किया है।

**द्वितीय अध्याय** यज्ञ-चिकित्सा सम्बन्धी है। इसमें कुछ रोगों की वेदोक्त यज्ञ चिकित्सा का वर्णन करके आयुर्वेद के ग्रन्थों के प्रमाण देकर यह बतलाया गया है कि किस प्रकार यज्ञ-चिकित्सा अन्य चिकित्सा-पद्धतियों की अपेक्षा अधिक उपकारी सिद्ध हो सकती है।

**तृतीय अध्याय** में अग्निहोत्र के प्रेरक तथा लाभ प्रतिपादक १२५ वेद मन्त्र अर्थ सहित दिए गये हैं, जिनमें पाठकों को ज्ञात हो सकेगा कि वेद की दृष्टि में यज्ञ एवं अग्निहोत्र का कितना अधिक महत्त्व है। वेदोक्त लाभों की इस लम्बी सूची को देखकर एक बार तो आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है और पाठक सोचने लगता है कि कहीं यह अतिशयोक्ति तो नहीं है।

**चतुर्थ अध्याय** में संस्कार विधि में प्रोक्त अग्निहोत्र की विधियों तथा मन्त्रों की विस्तृत व्याख्या की गई है, जो इस ग्रन्थ की बहुमूल्य सम्पदा है।

**पंचम अध्याय** में संस्कार विधि में पठित बृहद्यज्ञ के विशिष्ट मन्त्रों की व्याख्या है। ये मन्त्र अग्निहोत्र करते हुए किस स्थल के बाद पढ़ने चाहिये, इसकी भी मीमांसा की गई है।

**षष्ठ अध्याय** में दो झांकियाँ हैं। प्रथम में आत्मिक अग्निहोत्र का एक चित्र उपस्थित किया गया है। जिसमें दिखाया गया है कि आत्मिक अग्निहोत्र में अग्नि क्या है और इसमें समिधाओं तथा घृत की आहुतियाँ का क्या आशय होता है। दूसरी झांकी में अग्निहोत्र के भावनात्मक लाभों का प्रदर्शन है। इस अध्याय के अन्त में एक अध्यात्म गीत भी दिया गया है।

**सप्तम अध्याय** में यज्ञ और अग्निहोत्र से सम्बन्ध रखने वाली वैदिक साहित्य की ७५ लघु सूक्तियाँ दी गई है, जिनका भाषणों में प्रयोग हो सकता है तथा जिन्हें यज्ञशालाओं में अंकित किया जा सकता है।

**( ८ ) वेद मञ्जरी**- महर्षि दयानन्द का स्मरण आते ही एक और नाम का स्मरण स्वत: हो जाता है, वह है- वेद। वेद, वैदिक और संस्कृत साहित्य के विशाल अम्बार की निचली तह में पड़े थे। इस स्थिति को दयानन्द ने एक ही दृष्टि में भांप लिया। दयानन्द का वर्चस्व जागा और उन्होंने एक ही झटके में सब स्थिति को पलट दिया। जो ऊपर था वह नीचे हो गया और जो नीचे था, वह ऊपर आ गया। दयानन्द के हाथ वेद क्या लगे मानो सत्य की कसौटी हाथ लग गई। ऋषि दयानन्द ने वेद के लिए जो कुछ किया है, उस ऋण से उऋण होना सम्भव नहीं। वेदों का अस्तित्व तो दयानन्द से पूर्व था परन्तु वेद त्रयी के स्थान पर प्रस्थान त्रयी को अपनाया गया था। प्रस्थान त्रयी के उस पार जो वेद का लहराता हुआ समुद्र है, वहाँ तक पहुँचने के लिए जो बीच की खाई थी, उसके पार जाने का कौशल और आग्रहण दयानन्द ने ही किया। अत: आज हम परम्परा के विषय में ब्रह्मा से दयानन्द पर्यन्त कहने का साहस कर सकते हैं।

इस उपहार त्रयी में ३६५ मन्त्रों की हृदयहारी व्याख्या का नाम वेद मञ्जरी है। प्रस्तुत वेद मञ्जरी स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती जी की प्रेरणा से आचार्य श्री अभय विद्यालंकार की सुप्रसिद्ध पुस्तक वैदिक विनय की शैली पर लिखी गई है। परन्तु वैदिक विनय में व्याख्यात कोई मन्त्र नहीं लिया गया है। वेद मन्त्रों का चयन पारायण पूर्वक किया गया है। इन ३६५ मन्त्रों में ३१६ मन्त्र ऋग्वेद के, ४६ वेद मन्त्र यजुर्वेद के, २० मन्त्र सामवेद के और ८४ मन्त्र अथर्ववेद के हैं। पहले मन्त्र की क्रम संख्या दी है, फिर मन्त्र का शीर्षक दिया गया है। उसके पश्चात् मन्त्र तथा उसका पता है। मन्त्र के मध्य में एक स्थान पर तो पूर्व विराम आता है ही, इसके अतिरिक्त पाद विभाग सूचित करने के लिए प्रत्येक पाद समाप्ति पर अर्ध विराम का चिह्न दे दिया है। प्रत्येक पाद की समाप्ति पर अन्तिम अक्षर के ऊपर उस पाद की अक्षर संख्या भी दे दी है। दो पादों के मध्य की सन्धि को भी लेखक ने तोड़कर लिखा है। पते सहित मन्त्र के पश्चात् उस मन्त्र के ऋषि, देवता और छन्द का निर्देश है। शब्दार्थ के अनन्तर व्याख्या लिखी गई है जिसे लेखक ने मञ्जरी विकास का नाम दिया है।

लेखक ने मन्त्रार्थ अध्याय प्रक्रियानुसार प्रदर्शित किये हैं। पाठकों को अपने मन से यह विचार निकाल देना चाहिये कि वेद मन्त्रों की भाषा कठिन है। जो भी व्यक्ति शब्दरूप, धातुरूप, सन्धि और संस्कृत की सामान्य वाक्य रचना जानता है, वह वेद के अध्ययन में आनन्द ले सकता है।

प्रस्तुत वेद मञ्जरी का लेखन अगस्त १९८१ में प्रारम्भ हुआ और अगस्त १९८२ में इसका लेखन समाप्त हो गया। मञ्जरी के मन्त्रों का क्रम वेदों के क्रमानुसार रखा गया है। प्रत्येक वेद के मन्त्रों का आरम्भ करने से पूर्व १०-१० सूक्तियाँ अर्थ सहित दी गई है। पुस्तक के परिशिष्ट भाग में अकारादि क्रम से मन्त्रानुक्रमणिका, व्याख्यात मन्त्रों के देवताओं की सूची तथा मन्त्रार्थ टिप्पणियाँ भी दी गई हैं। देवता सूची से पाठक यह जान सकेंगे कि अमुक देवता के कितने मन्त्र किस-किस संख्या पर व्याख्यात हैं।

**( ९ ) वैदिक नारी**- हमारे देश में मध्यकाल में बहुत समय तक नारी उपेक्षित तथा अपमानित रही है।

किन्तु आज युग बदल गया है। आज सर्वत्र नारी समाज में जागृति आई है। महर्षि दयानन्द ने अन्य समाज सुधारकों के साथ नारी जाति की दशा सुधारने का बड़ा योगदान किया था। यह देखकर एक सुखद सन्तोष होता है कि वेदों में नारी की स्थिति अत्यन्त गौरवास्पद वर्णित हुई है। वेद की नारी देवी है, विदुषी है, प्रकाश से परिपूर्ण है, वीरांगना है, वीरों की जननी है, आदर्श माता है, कर्त्तव्य पारायण धर्म पत्नी है, सद्गृहिणी है, घर की सम्राज्ञी है, सन्तान की प्रथम शिक्षिका है, अध्यापिका बनकर कन्याओं को सदाचार और ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देने वाली है। उपदेशिका बनकर सबको सन्मार्ग बताने वाली है, मर्यादाओं का पालन करने वाली है। जग में सत्य और प्रेम का प्रकाश करने वाली है। यदि वह गुणकर्मानुसार क्षत्रिया है, तो धनुर्विद्या में निष्णात होकर, राष्ट्र रक्षा में भी हिस्सा बटांती है। यदि उसमें वैश्य के गुण-कर्म है तो वह उच्चकोटि के कृषि पशुपालन, व्यापार आदि में भी योगदान करती है और शिल्प विद्या की भी उन्नति करती है। घर की सम्पूर्ण व्यवस्था का उत्तरदायित्व उसका है। वेदों की नारी पूज्य है, स्तुति योग्य है, रमणीय है, आह्वान योग्य है, सुशील है, बहुभृत है, यशोमयी है।

वेदों में नारी को जो स्वरूप प्रतिबिम्बित हुआ है उसकी झांकी देने के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। यह तेरह परिच्छेदों में विभक्त है। प्रत्येक परिच्छेद का विषय, विषय सूची में विस्तार से प्रदर्शित कर दिया गया है। प्रथम तीन परिच्छेद विचारात्मक शैली में और शेष परिच्छेद तरंगात्मक शैली में लिखे गये हैं। पुस्तक में लगभग सवा दो सौ पूरे मन्त्रों की तथा लगभग सवा सौ मन्त्रांशों की व्याख्या की गई है। मन्त्रों तथा मन्त्रांशों की अनुक्रमणिकाएँ पुस्तक के अन्त में दे दी गई हैं।

इसमें वैदिक नारी के वैदिक विवाह, वेदों में नारी की स्थिति, नारी की स्थिति पर स्वामी दयानन्द के वेद मूलक विचार, उषा के समान प्रकाशवती, वीरांगना, वीर-प्रसवा, विद्यालंकृता, स्नेहमयी माँ, पतिवरा (कन्या द्वारा पति वरण), धर्मपत्नी (वर द्वारा पाणिग्रहण और वधू के प्रति उद्गार), अन्नपूर्णा, सद्गृहिणी और सम्राज्ञी (वृद्धजनों का वधू को आशीष व उपदेश, आशीर्भाजन वधू-वर (वधू-वर दोनों) को आशीष व उपदेश का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त नारी का शील, नारी महिमा, मातृस्तुति, सूक्तियाँ, मन्त्रानुक्रमणिका, श्लोकाद्यनुक्रमणिका तथा प्रयुक्त मन्त्रांशों की अनुक्रमणिका भी दी गई है।

प्रस्तुत पुस्तक चार वेदों तक ही सीमित रही है। लेखक का प्रयोजन केवल वैदिक नारी का आदर्श प्रस्तुत करना ही है। प्रतिपक्षियों की ओर से वैदिक नारी पर जो कतिपय आक्षेप किये गये हैं, उसका समाधान भी दिया गया है। इसका प्रकाशन १९८४ में किया गया था।

**(१०) वैदिक मधुवृष्टि**- प्रस्तुत पुस्तक का नाम **'वैदिक मधुवृष्टि'** रखा गया है। वेद में अध्यात्म चिन्तन, कर्त्तव्योपदेश, प्रकृति विषयक ज्ञान आदि विभिन्न विषयों का ज्ञान भरा पड़ा है। उसी मधु को वेद पिपासु पाठकों के लिए बरसाने का इस ग्रन्थ में प्रयास है। इस पुस्तक में छोटे-बड़े ३२ निबन्ध हैं जिसमें लगभग ३५० वेद मन्त्र तथा बहुत से मन्त्र खण्ड आ गये हैं। प्रत्येक निबन्ध के अन्त में पदार्थ दर्शा दिए गए हैं, जिससे जो पाठक पदार्थ-बोध करना चाहे तो कर सके। निबन्ध परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव, उपासना, आशावादिता, माधुर्य, पापमोचन, मानव शरीर के महत्व, आचार्य-शिष्य, आश्रम-व्यवस्था, विश्व बन्धुत्व, राष्ट्रोन्नति में राजा प्रजा के उत्तरदायित्व, शिक्षा शास्त्र, भक्ति एवं कर्म, यज्ञ चिकित्सा, योग सिद्धि, वैदिक काव्यालंकार, अर्थव्यवस्था, मानवता, प्राणदायनी वर्षा आदि कई विषयों से सम्बन्ध रखते हैं। निबन्धों में जो उदात्त भावनायें, जो आदर्श, जो प्रेरणायें, जो मर्यादायें, जो जीवन सूत्र प्रदर्शित है, उनका आकलन पढ़कर ही किया जा सकता है। इसका प्रकाशन १९९१ में किया गया था।

**(११) आर्ष ज्योति**- प्रस्तुत ग्रन्थ का नाम **'आर्ष ज्योति'** रखा गया है क्योंकि इसमें सभी विषयों पर

रूढ़िवादी विचारों को त्यागकर आर्ष दृष्टि से विचार किया गया है। इस पुस्तक में १७ निबन्ध संकलित हैं। इसका प्रकाशन १९९१ में किया गया। इसके निबन्धों के विषय ये हैं- वेदाध्ययन क्यों करें, वैदिक योगार्थ प्रक्रिया एवं स्वामी दयानन्द की तद्विषयक सूक्ष्म दृष्टि, वेद व्याख्या के प्रयास, स्वामी दयानन्द का महान् योगदान, वेद व्याख्या को महर्षि दयानन्द की अद्‌भुत देन, स्वामी दयानन्द के यजुर्वेद भाष्य पर एक तुलनात्मक दृष्टि, अथर्ववेद के कौशिक कृत विनियोगों पर एक दृष्टि, वेदों के अनेक देवों में एक ईश्वर की झांकी, वेदार्थ के ऐतिहासिक पक्ष पर चर्चा, वेदों में पुनरुक्ति की समस्या, वैदिक अंगिरस् ऋषि ऋग्वेद के ऋषभ और उक्षन् शब्दों का अर्थ विचार, मांस भक्षण के पक्ष में दिये जाने वाले कतिपय वेद मन्त्रों पर विचार, गोहत्या एवं गोमांसाहार वैदिक नहीं, वैदिक वृष्टि यज्ञ, पर्यावरण वेद की दृष्टि में, सतीप्रथा वेद विरुद्ध आदि विषयों पर विशद विवेचन किया गया है। इस पुस्तक का प्रकाशन १९९१ में किया गया था।

**( १२ )** आप द्वारा महर्षि दयानन्द की भाषा शैली को आधार मानते हुए 'सामवेद' का सुबोध भाषा में संस्कृत हिन्दी भाष्य किया गया है।

**( १३ ) ऋग्वेद ज्योति**- वेद सचमुच अनन्त हैं। उनके एक-एक शब्द में इतना कुछ भरा हुआ है कि एक ही शब्द पर घण्टों चिन्तन किया जा सकता है। अत: वैदिक ऋचाओं पर जितना भी लिखा जाये, वह सागर में बिन्दु के समान अल्प ही है। इस विस्तीर्ण वेद राशि में से प्रस्तुत संकलन ऋग्वेद की २०० मन्त्रों की व्याख्या है। मन्त्रों के चयन में विविधता का ध्यान रखा गया है और व्याख्या में मन्त्रगत आशय को पूर्णत: प्रस्फुटित करने का प्रयास किया गया है। व्याख्या प्रवाहमयी है, उसे बार-बार आनन्द लेते हुए पढ़ा जा सकता है। प्रथम प्रत्येक ऋचा का एक आकर्षक शीर्षक दिया है, जिससे प्रतिपाद्य नियम की झांकी मिल जाती है। फिर सस्वर, ऋचा लिखकर उसके ऋषि, देवता और छन्द का निर्देश है। फिर कोष्ठक में संस्कृत शब्द देते हुए मन्त्रार्थ है, तदनन्तर व्याख्या। यथास्थान ऊपर अंक देकर नीचे आवश्यक टिप्पणियाँ भी दी गई हैं।

भूमिका में वेदों के संक्षिप्त सामान्य विवेचन के पश्चात् ऋग्वेद के प्रतिपाद्य विषय पर प्रकाश डाला गया है। देवताओं को अकारादि क्रम से लिखा गया है। अन्त में ऋग्वेद में प्रयुक्त उदात्त, अनुदात आदि स्वरों पर विवेचन है, जिससे पाठकों को स्वरशास्त्र का भी सामान्य परिचय हो सके।

वेद की चार तरंगणियाँ प्रवाहित होती हुई मानव को नियन्त्रित कर रही हैं कि वह आकर उसके ज्ञान सलिल में गोते लगाये, स्नान करे, जलक्रीड़ा करे। आईये, आज इस ऋग्वेद की तरंगिणी में तैरें, स्नान करें, विद्यावारि से स्वयं को सींचें और उससे प्रफुलता एवं पवित्रता प्राप्त करे। ऋग्वेद भास्कर की निर्मल किरणें हमें आप्लावित कर रही हैं। आइये, इनसे ज्योति प्राप्त करें। इसका प्रकाशन वेद मन्दिर ज्वालापुर हरिद्वार में १९९६ में हुआ।

**सम्मान**- 'अर्थ', 'यश' एवं 'सम्मान' की लालसा से नहीं, वरन 'स्वान्त: सुखस' तथा वेदों में निहित ज्ञान को वेद प्रेमियों तक पहुँचाने के उद्देश्य से साहित्य सृजन में व्यस्त आपको कई पुरस्कारों एवं सम्मानों से सम्मानित किया चुका है-

१- आचार्य जी वेद की अनवरत सेवा के लिए १९८८ में आर्यसमाज सान्ताक्रुज बम्बई ने वेद-वेदाङ्ग पुरस्कार एवं २१ हजार रुपये की राशि प्रदान कर सम्मानित किया।

२- १९८९ में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में 'विद्यामार्तण्ड' की मानद उपाधि से आपको सम्मानित किया गया।

३- आपके द्वारा संस्कृत के प्रचार-प्रसार एवं विकास कार्य हेतु की गई दीर्घकालीन विशिष्ट तथा वैदिक साहित्य के शोधपूर्ण ग्रन्थों के प्रणयन के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत ग्रन्थ अकादमी द्वारा १९९० में पच्चीस हजार रुपये के

विशिष्ट पुरस्कार से आदृत किया गया।

४- श्री स्वामी समर्पणानन्द जी के जन्म दिवस पर उनकी स्मृति में स्थापित 'समर्पण शोध संस्थान' ने श्री पण्डित जी द्वारा लिखित एवं सम्पादित सामवेद-भाष्य के लोकार्पण समारोह के अवसर पर १ अगस्त १९९१ को पच्चीस सहस्त्र की राशि प्रदान कर सम्मानित किया गया।

५- उत्तरांचल संस्कृत अकादमी की ओर से महामहिम राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने भी आपको सम्मानित किया।

आपका विशुद्ध सात्त्विक जीवन, सरल व्यवहार, मितभाषिता, माधुर्य, विशुद्ध ब्राह्मणवृत्ति से वेदों का गम्भीर अनुशीलन एवं विशिष्ट अध्ययन शैली अनुकरणीय है। आपके नाम के आगे 'आचार्य' पद वस्तुत सार्थक है। छात्रों को प्रोत्साहित कर, उनमें कुलीय भावना का प्रस्फुटन करना आपके स्वभाव का सदा अंग रहा। जीवन के अन्तिम अवसर पर गीताश्रम ज्वालापुर हरिद्वार में रहते हुए स्वाध्याय एवं लेखन में व्यस्त रहते हुए १० अप्रैल २०१३ को आप अपने इहलोक की यात्रा को सम्पन्न करते हुए प्रभु के चरणों में चले गये। ऐसे विद्वान्, विनम्र, सरल, सद्व्यवहारी, महामना को शत-शत नमन।

सन्दर्भ सहयोगी साहित्य-

अ. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार से प्रकाशित पण्डित जी का जीवन चरित्र

ब. आचार्य रामनाथ वेदालंकार द्वारा लिखित ग्रन्थ - १. वैदिक वीर गर्जना, २. वेदों की वर्णन शैलियाँ, ३. वैदिक सूक्तियाँ, ४. वैदिक भाष्यकारों की वेदार्थ प्रक्रियाएँ, ५. दयानन्द विचार कोश (महर्षि दयानन्द के शिक्षा, राजनीति, कला-कौशल सम्बन्धी विचार), ६. वैदिक प्रार्थना पुष्पांजलि, ७. यज्ञ मीमांसा अर्थात् अग्निहोत्र दर्पण ८. वेद मञ्जरी, ९. वैदिक नारी, १०. वैदिक मधुवृष्टि, ११. आर्ष ज्योति, १२. सामवेद भाष्य १३. ऋग्वेद ज्योति।

**मन्त्री परोपकारिणी सभा, अजमेर**

**सम्पर्क सूत्र-९९१११९७०७३**

**परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन**

**रियायती मूल्यों पर महर्षि दयानन्द सरस्वती की २००वीं जन्म-जयन्ती शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में ५० प्रतिशत की छुट**

| पुस्तक का नाम | वास्तविक मूल्य रुपये |
|---|---|
| विवाह पद्धति | २० |
| शिक्षापत्रीध्वान्त निवारण | ०२ |
| वेदान्तिध्वान्त निवारण | ०२ |
| समाधी | १०० |
| सामवेद शतक | ३० |
| जिज्ञासा विमर्श | १०० |
| इतिहास प्रदूषण | १०० |
| इतिहास साक्षी | ५० |
| वेदामृत | ५० |
| सत्यासत्य निर्णय | २५ |
| The Book of Prayer | 35 |
| Kashi Debate | 20 |
| A Critique of Swami Naryan Seet | 20 |
| An Examination of Vallabh Seet | 20 |
| Five Great Rituals of The Day | 20 |
| Bhramaccheden | 25 |
| Bhranti Nivarana | 35 |
| Atmakatha | 20 |
| Gokarunanidhi | 12 |
| Dayanand Interparetation of Vedas | 05 |
| संध्या सुरभि कलेण्डर | ३५ |
| महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ कलेण्डर | २५ |
| The Pre Islamic Religious of Arabia | 20 |
| वेदमाता | १०० |
| शंका समाधान | ७० |
| ईश्वर | १५० |
| नवयुग की आहट | ६० |
| वैदिक इस्लाम | १० |
| पं. आत्माराम अमृतसरी | १०० |
| इतिहास बोल पड़ा | १०० |
| मृत्यु सूक्त | २०० |
| सत्यार्थ सुधा | १५० |

**पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-**

**दूरभाष-0145-2460120,चलभाष- 7878303382**

# पानी के बुलबुले को निरन्तर ऊर्जा की आवश्यकता

-धर्मेन्द्र जिज्ञासु

श्रद्धा के अवतार शुद्ध श्रद्धा की मूरत।
श्रद्धा के आधार अटल पर्वत की सूरत।।
श्रद्धा के अद्वैत भक्त व्रतधारी।
श्रद्धा हित बलिदान हुए स्वामिन्! बलिहारी!!
( बाबू हीरालाल जी सूद-कोटा राज्य के राजकवि)

वीर सावरकर जी ने लिखा है -''इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि हमारे श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी ने हिंदू जाति पर तथा हिंदुस्तान की बलि वेदी पर अपने जीवन की आहुति दे दी। उनका सम्पूर्ण जीवन विशेषकर उनकी शानदार मौत हिंदू जाति के लिए एक स्पष्ट संदेश देती है। सन् १९२६ के २९ अप्रैल के ''लिबरेटर'' पत्र में उन्होंने लिखा- ''स्वराज्य तभी सम्भव हो सकता है जब हिंदू इतने अधिक संगठित और शक्तिशाली हो जाएं कि नौकरशाही तथा मुस्लिम धर्मोन्माद का मुकाबला कर सकें।''

इससे हिंदू जाति की तीव्र मांग का पता चल सकता है और विशेषकर ऐसे नाजुक समय में जब कि इस पर (हिन्दू जाति पर) चारों ओर से आघात और आक्रमण हो रहे हों।

स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा किए गए सभी महान् कार्यों का वर्णन करना सरल नहीं है। इनके द्वारा किए केवल चार महान् आन्दोलनों का संक्षिप्त वर्णन यहां प्रस्तुत है - गुरुकुल, शुद्धि, दलितोद्धार और हिंदू संगठन।

**१. बीसवीं सदी का चमत्कार**

सन् १९०२ ईस्वी में स्थापित गुरुकुल कांगड़ी का उद्देश्य स्वामी श्रद्धानन्द जी (उस समय महात्मा मुंशीराम) ने यह बताया कि मैंने यह संस्था अंग्रेजी सरकार के गुलाम पैदा करने के लिए नहीं खोली है , मैंने यह संस्था इसलिए स्थापित की है कि यहां पर ऐसे ब्रह्मचारी उत्पन्न हों जो वैदिक धर्म के प्रचार के लिए अपना जीवन आहूत कर सकें।''

साहित्यकार तथा क्रान्तिकारियों के साथी यशपाल ने ''सिंहावलोकन'' में लिखा है कि गुरुकुल कांगड़ी की शिक्षा से हम लोग संध्या करते समय यह स्वप्न देखते थे कि इंग्लैंड पर आर्यों का राज्य हो गया है।

किसी इतिहासकार ने लिखा है कि यदि इंग्लैंड की भूमि ने ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार हेतु क्लाइव को पैदा किया तो उसकी टक्कर में भारत ने स्वामी दयानन्द जी को पैदा किया। यदि इंग्लैंड ने हिंदू जाति को नष्ट करने के लिए लार्ड मैकाले को पैदा किया तो भारत भूमि ने हिंदू जाति की रक्षा के लिए श्रद्धानन्द जी को पैदा किया।

हिन्दू जाति और भारतीय संस्कृति की रक्षा के महान् कार्य के लिए स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने कांगड़ी, इन्द्रप्रस्थ, सूपड़ा आदि स्थानों पर शैक्षणिक रक्षा दुर्ग अर्थात गुरुकुल स्थापित किए। गुरुकुल स्वामी जी के उद्देश्यों तथा तड़प का ज्वलन्त स्मारक हैं।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपने पत्र ''सद् धर्मप्रचारक'' में ''मेरे कुछ असिद्ध स्वप्न'' शीर्षक से लेख लिखा। उसकी अंतिम पंक्तियां हैं- ''सारा सभ्य संसार इस समय अनुभव कर रहा है कि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही संसार की वर्तमान अशांति की औषधि है। तब गुरुकुल की रक्षा और उन्नति के लिए जो भी उपाय उचित हों उनकी, जनता को उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।''

**२. स्वामी श्रद्धानन्द जी की अंतिम इच्छा**

आर्य हिंदू जाति एक और कार्य के लिए स्वामी श्रद्धानन्द जी की ऋणी रहेगी और वह ईसाई मुसलमान बन चुके हिंदूओं की शुद्धि, जिसे आज घर वापसी का जाता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी की प्रेरणा से आगरा, मथुरा, भरतपुर, गुरुग्राम, फरीदाबाद, बल्लभगढ़,पलवल

होडल, हथीन के असंख्य ब्राह्मण, राजपूत, जाट व गुर्जर समाज के तत्कालीन प्रमुख व्यक्तियों ने शुद्धि आन्दोलन में तन-मन-धन से सहयोग किया।

हिंदू जाति की रक्षा हेतु चलाए गए शुद्धि आन्दोलन की बलि वेदी पर बलिदान होने से मात्र एक दिन पहले २२ दिसम्बर सन् १९२६ ईस्वी की दोपहर में स्वामी श्रद्धानन्द जी ने, शुद्धि सभा के स्वामी चिदानन्द जी से कहा- ''मैं रहूं या ना रहूं किंतु मेरे पश्चात् शुद्धि का काम बंद न होने पाए। शुद्धि आर्य हिंदू जाति के लिए अमर बूटी है, इसे बराबर सींचते रहना। याद रखना कि हिंदुओं का जोश पानी के बुलबुले जैसा है। इसलिए आर्य हिन्दूओं में शुद्धि के लिए उस समय तक बराबर जोश भरते रहने की आवश्यकता है जब तक कि हिंदुओं से बने करोड़ों-मुस्लिम भाई पुनः अपनी पुरानी आर्य जाति में पूर्ण शामिल नहीं हो जाते।''

**३. राम किस किसके पूर्वज हैं**

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने लिखा है - ''राम की अपूर्व कहानी और चरित्र ने गिरे से गिरे हुए समय में भारतीयों के चरित्र संगठन में सहायता की है। हम सब राम की ही संतान तो हैं। भारतवर्ष के सात करोड़ मुसलमान प्रजा में से कितने हैं जो भारत में विभिन्न देशों से आकर बसे हैं और फिर क्या वे भी उन्हीं आर्यों की औलाद नहीं जिन्होंने ईरान (आर्य देश) और अरब को जा बसाया था। कितने ईसाई हैं जो बाहर से आकर बसे हैं? और उनमें से भी कौन यूरोपियन है जो आर्य वंशज होने से इंकार कर सकता है। सीता, राम , लक्ष्मण और भरत इन सब के ही तो पूर्वज थे।''

**४. ज्वलन्त प्रश्न**

श्री स्वामी चिदानन्द जी लिखते हैं कि यह थी हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी की अन्तिम कामना। पर प्रश्न होता है कि क्या हमने, हमारे सहयोगियों ने और सम्पूर्ण आर्य जाति ने श्रद्धेय स्वामी जी की कामना को पूरा करने के निमित्त कोई कदम आगे बढ़ाया? क्या हमने उस अमर हुतात्मा के आदेश रूप शुद्धि को अपनी अन्तरात्मा की तुष्टि के लिए आर्य जाति के संगठन एवं उसकी उन्नति के लिए, भारत देश के हित के लिए और समस्त विश्व की सुख शांति के लिए सच्चे हृदय से अपनाया और उसके प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन किया है?

**५. वार्षिकोत्सव की सार्थकता**

आज प्रत्येक आर्य समाज को अपनी वार्षिक योजना बनाने की आवश्यकता है कि इस वर्ष इतनी दलित बस्तियों में वैदिक धर्म व प्रेम का संदेश देने जाएंगे। इतनी वाल्मीकि बस्तियों में तथा इतनी झुग्गी झोपड़ियों में ईश्वरीय ज्ञान वेद का प्रकाश पहुंचायेंगे। सेवा भाव से दलित, वाल्मीकि आदि भाईयों को आर्य विचारधारा से परिचित करते हुए उन्हें आर्य समाज में निमंत्रित करेंगे और इसकी उपलब्धि का विश्लेषण आर्य समाज के वार्षिकोत्सव पर प्रस्तुत किया जाये तो उत्सव की कुछ सार्थकता बनेगी।

**६. हिन्दू संगठन व राष्ट्र रक्षा मंदिर-चुनौतियों का उत्तर**

आज आर्य हिन्दू जाति को विधर्मियों के अनेक षड्यन्त्रों का सामना करना पड़ रहा है जैसे धर्मान्तरण, लव जिहाद, हिंदुओं का भयभीत होकर पुश्तैनी मकान बेचने तथा पूर्वजों के स्थान से पलायन करने पर मजबूर होना इत्यादि। आज हिन्दू संगठन की अत्यन्त आवश्यकता है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने इसी उद्देश्य से सन् १९२४ ईस्वी में अंग्रेजी में एक पुस्तक ''हिन्दू सोलिडेरिटी: सेवियर आफ डाइंग रेस'' नाम से लिखी थी। वर्तमान में यह महत्त्वपूर्ण पुस्तक हिन्दी में ''हिन्दू संगठन'' नाम से उपलब्ध है। हर आर्य हिन्दू को यह पुस्तक अवश्य पढनी चाहिए। स्वामी श्रद्धानन्द जी चाहते थे कि ''भारत के प्रत्येक नगर और शहर में एक हिंदू राष्ट्र मन्दिर हो, जिसमें एक साथ अच्छी संख्या में २५००० व्यक्ति समा सकें। उन स्थानों पर प्रतिदिन भगवद्गीता, उपनिषद् रामायण महाभारत की कथा होनी चाहिए। राष्ट्र मंदिरों

का प्रबन्ध स्थानीय सभा के हाथ में रहना चाहिए और इनमें अखाड़े, कुश्तीगत का आदि प्रबन्ध करें। इस राष्ट्र मंदिर में तीन मातृशक्तियों की पूजा का प्रबन्ध होना चाहिए, गौ माता, सरस्वती माता और भूमि माता। मन्दिर के प्रमुख द्वार पर गायत्री मन्त्र लिखा होना चाहिए।

मन्दिर के प्रमुख स्थान में भारत माता का सम्पूर्ण नक्शा बनाना चाहिए। प्रत्येक भारतीय उसके सामने खड़ा होकर इस प्रतिज्ञा को दोहरायेगा कि वह मातृभूमि को प्राचीन गौरव के उस स्थान पर पहुंचाने के लिए प्राण तक की बाजी लगा देगा जिस स्थान से उसका पतन हुआ था।

मैंने स्नेह और नम्रतापूर्वक जो दिशा बताई है यदि उसका श्रद्धा और विश्वास के साथ अनुगमन किया जाए तो मैं समझता हूं कि सभी सुधार धीमे-धीमे हो जाएंगे और मानव समाज के कल्याण के लिए एक बार फिर आर्यों की सन्तान सामने आकर खड़ी हो जाएगी।''

**७. अपने आपसे पूछिये**

आज प्रत्येक आर्य, प्रत्येक आर्यसमाज स्वयं से यह प्रश्न पूछे कि उसने स्वामी श्रद्धानन्द जी के ऋण से उऋण होने के लिए गुरुकुल आन्दोलन, शुद्धि कार्यक्रम और हिन्दू संगठन हेतु क्या रचनात्मक योगदान किया है? वर्तमान समय की चुनौतियों के निराकरण हेतु सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आन्दोलन जैसे गले लगाईये, रिश्ते बचाइये आदि को भी युद्ध स्तर पर अपनाने की अत्यंत आवश्यकता है।

अन्यथा एक आर्य भजनोपदेशक के शब्दों में -

लगा एक रोग जाति को,
मिटाना किसके बस का है।
हमें कहने की आदत है,
तुम्हें सुनने का चस्का है।।

( संदर्भ पुस्तक: स्वामी श्रद्धानन्द एक विलक्षण व्यक्तित्व, लेखक डॉक्टर विनोदचन्द्र विद्यालंकार, संस्करण सन् २००५ ईस्वी, प्रकाशक-श्री घूडमल प्रहलाद कुमार आर्य धर्मार्थ ट्रस्ट हिण्डौन सिटी राजस्थान)

**मन्त्री, आर्यवीर दल हरियाणा**
**मोबाइल 8376070712**

## ।। आवश्यक सूचना ।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी सभा अजमेर के द्वारा संस्थापित एवं संचालित महर्षि दयानन्द गुरुकुल आश्रम , ग्राम-जमानी, त-इटारसी, जिला-नर्मदापुरम्, मध्यप्रदेश के नाम से दान की रसीद छपवाकर अनधिकृत रुप से कुछ लोग गुरुकुल के नाम से दान एकत्रित करके धन का दुरुपयोग कर रहे हैं, एकत्रित किये हुए दान को सभा में जमा भी नही करवाते हैं और न ही कोई हिसाब सभा को देते हैं।

आप सभी आर्य महानुभावों से निवेदन है कि अनधिकृत व्यक्तियों को दान न देवे, और यदि उपरोक्त नाम की रसीद से आपने दान दिया है तो उस रसीद को अथवा उसकी फोटोकापी को अति शीघ्र सभा के निम्न पते पर भिजवावे।

जिससे परोपकारिणी सभा द्वारा अनधिकृत रुप से रसीद छपवाकर दान एकत्रित करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध वैधानिक कार्यवाही की जा सके।

**मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, पिन- ३०५००१**

**दूरभाष - ९९१११९७०७३**

# दिल्ली विश्वविद्यालय मनुस्मृति के वैचारिक चिन्तन से भयभीत क्यों है?

- डॉ. सुरेन्द्र कुमार
( पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार )

भारत की राजधानी दिल्ली में एक शताब्दी से स्थित केन्द्रीय दिल्ली विश्वविद्यालय एक प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय रहा है जिसको राजनीति से मुक्त और स्वतन्त्र वैचारिक चिन्तन का शिक्षाकेन्द्र माना जाता रहा है। पिछले कुछ महीनों से कुलपति प्रो. योगेश सिंह के मनुस्मृति विषयक दो निर्णय अखबारों और सोशल मीडिया में सुर्खियों में हैं। विश्वविद्यालय के 'लॉ डिपार्टमेंट' ने भारत का प्राचीन संविधान होने के कारण अपने पाठ्यक्रम में मनुस्मृति को पढ़ाने हेतु प्रस्ताव भेजा। कुलपति महोदय ने तुरन्त उसको निरस्त कर दिया। गत दिनों संस्कृत विभाग ने भारत का प्राचीन धर्मशास्त्र एवं आचारशास्त्र होने के कारण मनुस्मृति के कुछ अंश अपने पाठ्यक्रम में 'रिकमेंडिड बुक' के रूप में पढ़ाने हेतु प्रस्ताव भेजा। कुलपति प्रो. योगेशसिंह ने न केवल उसको निरस्त किया अपितु मीडिया में यह भी घोषणा प्रसारित कर दी कि दिल्ली विश्वविद्यालय में भविष्य में भी मनुस्मृति नहीं पढ़ाई जायेगी। इसके साथ उन्होंने एक सच भी कहा कि मुझे मनुस्मृति के बारे जानकारी नहीं है। क्योंकि कुलपति महोदय का शैक्षिक विषय इंजीनियरिंग रहा है इस कारण उनका यह कथन सही हो सकता है। किन्तु यदि जानकारी नहीं है तो उच्च पद पर आसीन अधिकारी का प्रक्रियात्मक दायित्व बनता है कि प्राचीन परम्परागत सर्वोच्च धर्मशास्त्र विषयक वस्तुस्थिति की स्वयं अथवा विशेषज्ञ समिति बनाकर पहले जानकारी प्राप्त करें और फिर निर्णय लें। संस्कृत साहित्य के अध्येता अनेक यूरोपीय लेखकों, भारत के प्राचीन साहित्यकारों और नवीन लेखकों एवं बुद्धिजीवी लोगों ने मनुस्मृति को आदि-संविधान और भारतीय साहित्य का गौरवशाली धर्मशास्त्र माना है। उनके कुछ उद्धरण मैं आगे इस लेख में भी प्रस्तुत करूंगा। दुर्भाग्य का विषय है कि उसी विश्व-प्रशंसित भारत के शास्त्र की स्वयं भारत में ही उपेक्षा हो रही है!!!

विमर्शरहित अप्रामाणिक सुनी-सुनाई बातों पर किसी सुशिक्षित उच्च अधिकारी द्वारा एकपक्षीय निर्णय लेना न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता। यह भी विचारणीय है कि संसार में कोई भी धर्मपुस्तक, चाहे वह कुरान, बाइबल, बौद्ध या जैन ग्रन्थ है, सर्वमान्य और आपत्तिरहित नहीं है। यदि ऐसा होता तो संसार में एक ही मजहब होता। ऐसी स्थिति में उनमें से एक ही पुस्तक को लक्ष्य बनाना न्यायोचित कैसे माना जा सकता है? समानान्तर स्थिति यह है कि कुछ केन्द्रीय विश्वविद्यालयों और सरकारी अनुदान प्राप्त मदरसों में कुरान पढ़ाया जा रहा है, जिसकी कुछ आयतों पर दिल्ली न्यायालय ने अपने एक निर्णय में रिकॉर्डिड आपत्ति की हुई है। कुछ जगहों पर बाइबल का अध्ययन कराया जाता है। गोस्वामी तुलसीकृत 'रामचरितमानस' पर विरोधी जनों द्वारा बार-बार विवाद खड़ा किया जाता है। वह भी कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जा रहा है। दिल्ली विश्वविद्यालय और उसके कॉलेजों में भी पढ़ाया जा रहा होगा। अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में मनुस्मृति भी पढ़ाई जा रही है। जिस यूजीसी के नियमों के अन्तर्गत दिल्ली विश्वविद्यालय संचालित किया जा रहा है उसके पाठ्यक्रम में भी मनुस्मृति

पढ़ी जाती है। फिर भारत में और विश्व में परम्परागत रूप से प्रतिष्ठित भारतीय धर्मशास्त्र मनुस्मृति के साथ ये भेदभाव क्यों? सच तो यह है कि भ्रान्त धारणाओं के कारण मनुस्मृति के साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया जा रहा है।

मनुस्मृति पर आपत्ति करनेवालों की यह बात सच है कि वर्तमान मनुस्मृति में स्त्री-शूद्र विरोधी कुछ कथन हैं किन्तु स्त्री-शूद्रों के प्रबल सम्मान के कथन भी हैं। विरोधी जन उन अच्छे कथनों की चर्चा नहीं करते। एकपक्षीय विरोधी बातें करते हैं। उनका यह कथन पूर्णत: गलत है कि मनुस्मृति में जातिवाद है। मनुस्मृति में वर्णव्यवस्था है, जातिव्यवस्था नहीं। अब प्रश्न हो सकता है कि स्त्री-शूद्र विरोधी कथन क्यों हैं? उसका उत्तर यह है कि हजारों वर्ष पुराने इस ग्रन्थ में लोगों ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये समय-समय पर किये गये प्रक्षेप= मिलावटें (interpolations) हैं। जो मनुस्मृति की मूलभावना के विरुद्ध (against the spirit) और प्रसंगविरोध (out of conte&t) के कारण पहचानी जाती हैं। इस बात को इस उदाहरण से समझें जैसे सत्तर वर्ष की अवधि में ही हमारे संविधान में एक सौ से अधिक संशोधन किये जा चुके हैं। महात्मा गांधी 'वर्ण व्यवस्था' नामक पुस्तक में स्वीकार करते हैं कि 'मनुस्मृति में पायी जानेवाली आपत्तिजनक बातें बाद में की गयी मिलावटें हैं'। मनुस्मृति के विरोध की चर्चा करते हुए प्राय: विरोधी जन डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के नाम का सहारा लेते हैं। इस लेख में मैं उनके कुछ प्रमाण भी प्रस्तुत करूंगा जिनसे मनुस्मृति, वर्ण-व्यवस्था एवं जातिवाद विषयक उनकी धारणाएं स्पष्ट हो सकेंगी और उनके नाम पर जो मिथ्या धारणाएं फैला रखी हैं उनका निराकरण हो सकेगा।

**१. मनुस्मृति सबसे महत्वपूर्ण संविधान, धर्मशास्त्र और आचारशास्त्र है -**

डॉ. अम्बेडकर मनुस्मृति के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए उसके अध्ययन करने-कराने का परामर्श देते हैं और उसके रचयिता मनु को आदरणीय व्यक्ति घोषित करते हैं-

**(अ)** ''स्मृतियां अनेक हैं, तो भी वे मूलत: एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं।..... अन्य स्मृतियां मनुस्मृति की सटीक पुनरावृत्ति हैं । इसलिए हिन्दुओं के आचार-विचार और धार्मिक संकल्पनाओं के विषय में पर्याप्त अवधारणा के लिए मनुस्मृति का अध्ययन ही यथेष्ट है।'' (डॉ. अम्बेडकर वाङ्मय, खंड 7, पृ. 223)

**(आ)** ''अब हम साहित्य की उस श्रेणी पर आते हैं जो स्मृति कहलाता है। जिसमें से सबसे महत्त्वपूर्ण मनुस्मृति और याज्ञवल्क्यस्मृति हैं।'' (वही, खंड 8, पृ. 65)

**(इ)** ''मनुस्मृति को धर्मग्रन्थ के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।'' (वही, खंड 7, पृ. 228)

**(ई)** ''मनुस्मृति कानून का ग्रन्थ है, जिसमें धर्म और सदाचार को एक में मिला दिया गया है। चूंकि इसमें मनुष्य के कर्त्तव्य की विवेचना है, इसलिए यह आचारशास्त्र का ग्रन्थ है। चूंकि इसमें जाति (वर्ण) का विवेचन है, जो हिन्दू धर्म की आत्मा है, इसलिए यह धर्मग्रन्थ है। चूंकि इसमें कर्त्तव्य न करने पर दंड की व्यवस्था दी गयी है, इसलिए यह कानून है।'' (वही खंड 7, पृ. 226)

**(उ)** ''प्राचीन भारतीय इतिहास में मनु आदरसूचक संज्ञा थी। '' (वही, खंड 7, पृ. 151 )

**(ऊ)** ''याज्ञवल्क्य नामक विद्वान् जो मनु जितना महान् है।'' (वही, खंड 7, पृ. 179)

**२. मनुस्मृति में जातिव्यवस्था नहीं, वर्णव्यवस्था है**

**( क ) मनु के समय जन्मना जाति का उद्‌भव नहीं हुआ था**- मनुस्मृति में वेदोक्त वर्णव्यवस्था का वर्णन है। मनु के काल में जन्मना जाति की धारणा का उद्‌भव ही नहीं हुआ था। मनुस्मृति स्वयं इस स्थिति को स्पष्ट करती है–

**ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः त्रयो वर्णाः द्विजातयः।**
**चतुर्थ एकजातिस्तु शूद्रः नास्ति तु पंचमः॥**

(10, 4)

**अर्थ**- 'मनु कहते हैं कि मेरी वर्णव्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार ही वर्ण हैं, पांचवां कोई वर्ण नहीं है।' जब पांचवां कोई वर्ण ही नहीं था तो जाति होने का तो प्रश्न ही नहीं बनता। मनुस्मृति की सत्यता से अनजान या विरोधी लोग मनुस्मृति पर जातिवाद का आरोप बलात् थोप रहे हैं। डॉ. अम्बेडकर ने भी यह स्वीकार किया है कि मनुस्मृति के काल में आज की जातियां नहीं थी। आज की जातियों को मनु ने शूद्र कहीं नहीं कहा है।

**( ख ) जाति और वर्ण में मूल अन्तर**- जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था में भिन्नता करनेवाले बहुत-से मूलभूत अन्तर हैं। जिस दिन जिस माता-पिता से जन्म होता है उसी दिन उन्हीं की जाति अनिवार्य रूप से बालक को मिल जाती है। जबकि वर्ण का अर्थ है वरण करना=चयन करना। किसी भी कुल में उत्पन्न बालक गुरुकुल में प्रवेश लेने के बाद अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार शिक्षा और वर्ण का प्रशिक्षण पाकर उसके अनुसार स्वेच्छा से किसी भी वर्ण का चयन कर सकता था। जैसे आज के विद्यार्थी कला, विज्ञान, वाणिज्य, कानून, इंजीनियरिंग आदि का चयन करते हैं। गुरुकुल से स्नातक बनते समय आचार्य प्राप्त शिक्षा के अनुसार बालक-बालिका के वर्ण की घोषणा करता था, जैसे आजकल प्राप्त शिक्षा के अनुसार विद्यालय और विश्वविद्यालय कलास्नातक, वाणिज्य स्नातक, विज्ञान स्नातक, कानूनस्नातक आदि की उपाधियां प्रदान करते हैं। जन्मना जाति को कोई तीसरा व्यक्ति निर्धारित नहीं करता, जबकि वर्ण को तीसरा व्यक्ति आचार्य निर्धीरित करता था। मनुस्मृति में जाति शब्द वर्ण का पर्यायवाची है। मनुस्मृति का प्रमाण देखिए--

**आचार्यस्त्वस्य यां जातिं विधिवद् वेदपारगः।**
**उत्पादयति सावित्र्या सा सत्या सा जराऽमरा॥**

(2, 148)

**अर्थ**- ''वेदों में पारंगत आचार्य सावित्री=गायत्री मन्त्रपूर्वक यज्ञोपवीत संस्कार करके, विधिवत् शिक्षा देकर जो बालक-बालिका के वर्ण का निर्धारण करता है, वही उसका वास्तविक और स्वीकार्य वर्ण होता है।'' शिक्षा को ब्रह्मजन्म भी कहा है। शिक्षा रूप दूसरे ब्रह्मजन्म को पाकर ही कोई व्यक्ति द्विजाति बनता है।

**( ग ) वर्णपरिवर्तन–** आज विडम्बना यह है कि कोई भी व्यक्ति धर्म बदल सकता है किन्तु एक बार जाति निर्धारित होने के बाद वह न इस जन्म में बदलती है और न मृत्यु के बाद कभी। किन्तु एक बार वर्णनिर्धारण हो जाने के बाद भी यदि कोई बालक/व्यक्ति वर्णपरिवर्तन करना चाहता था तो उसको उसकी जीवनभर स्वतन्त्रता रहती थी। जैसे आज कोई कलास्नातक शिक्षक पुनः वाणिज्य की आवश्यक शिक्षा अर्जित करके वाणिज्य की उपाधि प्राप्त कर व्यवसायी बन सकता है। आज भी उसकी अनुमति उपाधियों के आधार पर शिक्षासंस्थान देते हैं या मान्यता द्वारा सरकार देती है, वर्णव्यवस्था-काल

में भी शिक्षासंस्थान और शासन देते थे। यह छूट जातिवादी व्यवस्था में नहीं है। मनुस्मृति यह क्रान्तिकारी छूट देती है–

**शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।**
**क्षत्रियात् जातमेवं तु विद्यात् वैश्यात् तथैव च॥**

(10, 65)

**अर्थ**– 'जीवन में शूद्र रहा व्यक्ति ब्राह्मण वर्ण की शिक्षा–प्रशिक्षण पाकर कभी भी ब्राह्मण बन सकता है। यदि ब्राह्मण अपने कर्तव्यों को छोड़ दे तो वह निचले वर्णों में शूद्र तक बन जाता है। ऐसे ही क्षत्रिय और वैश्य कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी वर्णपरिवर्तन कर सकते हैं।'

**( घ ) जाति- व्यवस्था वर्ण-व्यवस्था की विरोधी और भ्रष्ट रूप है–** सिद्धान्त यह है कि जहां वर्ण–व्यवस्था होगी वहां जाति–व्यवस्था नहीं होगी। इसलिये मनु की जाति–व्यवस्था नहीं थी। डॉ. अम्बेडकर का भी यही मानना है–

**( अ )** ''कहा जाता है कि जाति, वर्ण–व्यवस्था का विस्तार है बाद में मैं बताऊंगा कि यह बकवास है। जाति वर्ण का विकृत स्वरूप है। यह विपरीत दिशा में प्रसार है। जात–पात ने वर्ण–व्यवस्था को पूरी तरह विकृत कर दिया है।'' (अंबेडकर वांगमय, खंड 6, पृ. 181)

**( आ )** ''जातिप्रथा जो कि हिन्दू आदर्श है, चातुर्वर्ण्य का एक भ्रष्ट रूप है।'' (वही, खंड 1, पृ. 263)

**( इ )** ''एक बात मैं आप लोगों को बताना चाहता हूं कि मनु ने जाति के विधान का निर्माण नहीं किया और न वह ऐसा कर सकता था। जातिप्रथा मनु से पूर्व विद्यमान थी।'' (वही, 1, 29)

कोई कितना भी आग्रह करे, किन्तु यह निश्चित है कि डॉ. अम्बेडकर ने उक्त वाक्य लिखकर मनुस्मृति रचयिता मनु को ही नहीं, अपितु सभी मनुओं को जाति–व्यवस्था के निर्माता के आरोप से सदा के लिए मुक्त कर दिया है। इसके बाद डॉ. अम्बेडकर के नाम से मनु पर जातिवादी होने का आरोप लगाने का कोई औचित्य ही नहीं रहता।

**३. मनुस्मृति में शूद्र के प्रति भेदभाव नहीं –**

**( क ) मनुस्मृति में शूद्र सम्मान**– मनुस्मृति की वैदिक व्यवस्था में 'शूद्र' कर्तव्य आधारित संज्ञा थी। जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ण की शिक्षा और वर्ण का प्रशिक्षण नहीं प्राप्त करता था अर्थात् अशिक्षित और अप्रशिक्षित रह जाता था, वह 'शूद्र' कहलाता था। ऐसा व्यक्ति शारीरिक श्रम का सेवा कार्य करता था। आज की सरकारी सेवा में भी अशिक्षित व्यक्ति को शारीरिक कार्य की नौकरी ही मिलती है। मनु की वर्णव्यवस्था में उसके साथ ऊंच–नीच, छूत–अछूत आदि किसी प्रकार का भेदभाव नहीं था। वह अन्य वर्णों के सदृश सम्मानित था। ऊपर सप्रमाण दिखाया है कि शूद्र को जीवनभर वर्ण–परिवर्तन करके उच्च वर्ण में जाने का अधिकार था। जन्मना जातिवाद के आरम्भ होने के बाद जातिगत आधार पर जो ऊंच–नीच, छूत–अछूत आदि भेदभाव का व्यवहार शुरू हुआ, उसके कारण 'शूद्र' नाम हीनार्थ में रूढ़ हो गया। आज भी हीनार्थ में प्रयुक्त होता है। शूद्र–सम्मान और समानता का मनु द्वारा वर्णित एक अनुपम प्रमाण देखिए। ऐसा मानवीय उदाहरण दुनिया की किसी सभ्यता में नहीं मिलेगा–

**भुक्तवत्सु–अथ विप्रेषु स्वेषु भृत्येषु चैव हि।**
**भुंजीयातां ततः पश्चात्–अवशिष्टं तु दम्पती॥**

(3, 116)

**अर्थ**- अतिथि के रूप में आये विद्वानों और घर के सेवकों को पहले भोजन कराके बाद में शेष बचे भोजन को पति-पत्नी सेवन करें।

**( ख ) मनु की दण्डव्यवस्था और शूद्र**- पाठकवृन्द! यह कहना सर्वथा अनुचित है कि मनु ने शूद्रों के लिए कठोर दण्डों का विधान किया है और ब्राह्मणों को विशेषाधिकार एवं विशेष सुविधाएं प्रदान की है। मनु की यथायोग्य दण्डव्यवस्था में शूद्र को सबसे कम दण्ड है और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और राजा को उत्तरोत्तर अधिक दण्ड विहित है। देखिये मनुस्मृति का श्लोक-

**अष्टापाद्यं तु शूद्रस्य स्तेये भवति किल्बिषम्**
**षोडशैव तु वैश्यस्य द्वात्रिंशत् क्षत्रियस्य च ॥**

(8.337)

**ब्राह्मणस्य चतुःषष्टिः पूर्णं वाऽपि शतं भवेत्।**
**द्विगुणा वा चतुःषष्टिः, तद्दोषगुणविद्धि सः॥**

(8.338)

**अर्थात्**- किसी चोरी आदि के अपराध में शूद्र को आठ गुणा दण्ड दिया जाता है तो वैश्य को सोलहगुणा, क्षत्रिय को बत्तीसगुणा, ब्राह्मण को चौंसठगुणा या सौगुणा अथवा एकसौ अट्ठाईसगुणा दण्ड देना चाहिए। क्योंकि उत्तरोत्तर वर्ण के व्यक्ति अपराध के गुण-दोषों, उनके परिणामों और समाज पर पड़नेवाले दुष्प्रभावों को भलीभांति समझने वाले हैं, जबकि शूद्र अशिक्षित होता है।

**पिताऽऽचार्यः सुहृन्माता भार्या पुत्रः पुरोहितः ।**
**नाह्यदण्डयो नाम राज्ञोऽस्ति यः स्वधर्मे न तिष्ठति॥**

( 8.335 )

**अर्थ** - ''जो भी अपने निर्धारित धर्म-कर्त्तव्य और विधान का पालन नहीं करता, वह अवश्य दण्डनीय है, चाहे वह पिता, माता, गुरु, मित्र, पत्नी, पुत्र या पुरोहित ही क्यों न हो। यहां ब्राह्मण होते हुए भी गुरु और पुरोहित को अवश्य दण्ड देने का विधान है। अतः ब्राह्मण को जहां कहीं दण्डरहित छोड़ने का कथन मिलता है, वह इस मनुव्यवस्था के विरुद्ध होने से स्वार्थी लोगों द्वारा किया गया प्रक्षोप=मिलावट है।

**४. मनुस्मृति में नारी सम्मान के विधान -**

**( क ) नारी के सम्मान के बिना गृहस्थ असफल**- वैदिक परम्परा में 'माता' को प्रथम गुरु मानकर सम्मान दिया जाता था। मनुस्मृति वेदानुकूल परम्परा का शास्त्र है। महर्षि मनु विश्व के वे प्रथम महापुरुष हैं जिन्होंने नारी के विषय में सर्वप्रथम ऐसा सर्वोच्च आदर्श उद्घोष दिया है, जो नारी की गरिमा, महिमा और सम्मान को सर्वोच्चता प्रदान करता है। मनु का विख्यात श्लोक है-

**यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।**
**यत्रैताः तु न पूज्यन्ते सर्वाः तत्राफला क्रियाः॥**

(3.56)

**अर्थ** - इसका सही अर्थ है- 'जिस समाज या परिवार में नारियों का आदर-सम्मान होता है, वहां देवता अर्थात् दिव्य गुण, दिव्य सन्तान, दिव्य लाभ आदि प्राप्त होते हैं और जहां इनका आदर-सम्मान नहीं होता, वहां अनादर करने वालों का गृहस्थ निष्फल हो जाता है। नारियों के प्रति महर्षि मनु की सम्मानप्रद भावना का बोध कराने वाले उनके द्वारा नारी के लिये प्रयुक्त विशेषण हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त विशेषणों पर ध्यान दीजिये-

**प्रजनार्थं महाभागाः पूजार्हाः गृहदीप्तयः।**
**स्त्रियः श्रियश्च गेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन॥**

(मनु0 9.26)

**अर्थ**-'स्त्रियां सन्तान उत्पत्ति करके पति का भाग्योदय करने वाली, आदर-सम्मान के योग्य, गृहज्योति होती हैं। शोभा, लक्ष्मी और स्त्री में कोई अन्तर नहीं है, वे साक्षात् गृहलक्ष्मी हैं।' इसलिये मनुस्मृति में कहा है कि नारी की प्रसन्नता में परिवार की प्रसन्नता निहित है और पत्नी के शोकग्रस्त होने से कुल नाश हो जाता है (3, 57, 62)

**( ख ) दायभाग में पुत्र-पुत्री का समान अधिकार**- भारत के प्राचीन विधिनिर्माता महर्षि मनु ने पैतृक सम्पत्ति में पुत्र-पुत्री का समान अधिकार माना है। उनका यह मत मनुस्मृति के 9.130, 192 में वर्णित है। महर्षि मनु का वह मत आचार्य यास्क ने निरुक्त में इस प्रकार उद्धृत किया गया है-

**अविशेषेण पुत्राणां दायो भवति धर्मतः ।**
**मिथुनानां विसर्गादौ मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्॥**

(3, 4)

**अर्थात्**- ''सृष्टि के प्रारम्भ में स्वायम्भुव मनु ने यह विधान किया है कि धर्म अर्थात् कानून के अनुसार दायभाग =पैतृक सम्पत्ति में पुत्र-पुत्री का समान अधिकार होता है।'' इसी प्रकार मातृधन में केवल कन्याओं का अधिकार विहित करके मनु ने परिवार में कन्याओं के महत्त्व में अभिवृद्धि की है (9.131)।

**5. मनु की विश्व में प्रतिष्ठा और उसके प्रमाण**

महर्षि मनु की ख्याति प्राचीन काल में विश्वभर में थी और आज भी है। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर उनको जो महत्त्व प्राप्त है वह भारतीयों और मनुस्मृति के लिए गौरव का विषय है। बात-बात में विदेशी जनों के कथनों को प्रतिष्ठित प्रमाण माननेवाले भारतीयों को उनके निम्न प्रमाण भी मानने चाहियें-

**( क )** अमेरिका से प्रकाशित 'इंसाइक्लोपीडिया आफ दि सोशल सांइसिज' में मनु को आदि-संविधानदाता और मनुस्मृति को सबसे प्रसिद्ध विधिशास्त्र बताया है- "Throughout the farther east Manu is the name of the founder of law. Maun law book are knoun.....in later times the name 'MANU' became a title which was given to juristic writers of eceptional eminence." (P.260)

**अर्थात्**- पूर्वी देशों में सुदूर तक मनु का नाम विधि-प्रतिष्ठाता के रूप में जाना जाता है। मनु का संविधान (मनुस्मृति) भी प्रसिद्ध है। परवर्ती समय में मनु का नाम इतना महत्त्वपूर्ण बन गया कि उन देशों में संविधान निर्माताओं को 'मनु' नाम की उपाधि प्राप्त होने लगी। उनको 'मनु' कहकर पुकारा जाता था ।

**( ख )** संस्कृत-साहित्य के प्रसिद्ध समीक्षक और विद्वान् ए. ए. मैकडानल अपने 'ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर' में मनुस्मृति को सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण संविधान मानते हैं- "The most important and earliest of the matricol smrities is the Manava Dharm Shastra, or cod of Manu." (P. 432)

**अर्थात्** स्मृतियों में सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण मानव धर्मशास्त्र है जिसको 'मनु का संविधान' कहा जाता है।

**( ग )** न्यू जर्सी (अमेरिका) से प्रकाशित 'दि मैकमिलन फेमिली इंसाइक्लोपीडिया' में हिन्दू कानून में मनुस्मृति को महत्त्वपूर्ण संविधान माना गया है-

"Manu, his name is attached to the most important codification of Hindu law, the Manava-dharm shastra (Law of Manu )" ( Vol. 13, P. 131 ) अर्थात्- मानव धर्मशास्त्र=मनु का संविधान हिन्दू विधि-विधानों की एक बहुत महत्वपूर्ण संहिता है। उसके रचयिता मनु है ।

( **घ** ) संस्कृत साहित्य के समीक्षक एवं इतिहासकार ए. बी. कीथ अपने 'ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर' में मनु को विधिदाता और न्यायमूर्ति स्वीकार करते हैं-

"Manu, he was the renewer of secrificial ordinances and the dispenser of maims of justice. ( P. 440 ) '' =मनु धार्मिक विधियों तथा न्याय की विधियों का सर्वप्रथम प्रदाता था। और "The influence of the te&t is attested by its acceptance in Burma, siam ( Thailand) and Java as authoritative and production of works based on it." (P. 445)

अर्थात् -बर्मा, थाईलैंड, जावा आदि देशों में मनुस्मृति का प्रभाव और स्वीकार्यता एक प्रामाणिक, अधिकारिक और वहां के संविधान के स्रोतग्रन्थ के रूप में है। वहां के संविधान मनुस्मृति को आधार बनाकर लिखे गये हैं।

( **च** ) जर्मन के विख्यात दार्शनिक फ्रीडरिच नीत्से ने 'वियोंड निहिलिज्म नीत्शे, विदाउट मार्क्स' में मनुस्मृति और बाइबल की तुलना करके मनुस्मृति को बाइबल से उत्तम शास्त्र माना तथा बाइबल को छोड़कर मनुस्मृति को पढ़ने का नारा दिया। नीत्से ने कहा- "How wretched is the new testamant compared to manu. How faul it smalls!" (P.41) "Close the bible and open the cod of manu. (The will to power" Vol. I, Book II, P. 126 ) अर्थात्-मनुस्मृति बाइबल से बहुत उत्तम ग्रन्थ है। बाइबल से तो अश्लीलता और बुराइयों की बदबू आती है । बाइबल को बंद करके रख दो और मनुस्मृति को पढ़ो।

**६. भारतीय बुद्धिजीवियों और लेखकों के मन्तव्य**

आधुनिक भारतीय प्रतिष्ठित लेखकों, बुद्धिजीवियों और कानूनविदों ने भी मनु के प्राचीनतम होने और मनुस्मृति नामक संविधान के आदिप्रदाता होने का उल्लेख किया है-

( **क** ) भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी आफ इंडिया' में मनु को प्राचीनतम कानूनदाता स्वीकार करते हैं "MANU, the earliest eponent of the Law" (P. 118) = 'प्राचीनतम और कानून के आदिदाता मनु' हैं।

( **ख** ) 'मुल्लाज हिन्दू लॉ' में टी. देसाई कानून के प्रसंग में मनु को मूल विधिदाता और आदिपुरुष के रूप में प्रस्तुत करते हैं--"the original law-giver" (P. 19 ) =मनु आदि विधिदाता हैं'।

( **ग** ) श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर अपनी universal man' पुस्तक में मनु को भारत का 'ला गिवर' घोषित करते हैं "Our law giver Manu tells us" (P. 95) =हमारे लॉ गिवर (विधिप्रदाता) मनु ने हमें बताया है'।

( **घ** ) प्रसिद्ध आध्यात्मिक चिन्तक श्री अरविंद

'इंडियन लिटरेचर' में लिखते हैं- "The greatest and the most authoritative is the famous Laws of Manu." (P. 282-283) अर्थात्-मनु का संविधान सबसे महान्, सबसे प्रामाणिक और सबसे प्रसिद्ध है।

(ङ) भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन् 'इंडियन फिलासफी' में लिखते हैं- "the code of Manu, to which a high position is assigned among the smritis. (P. 515) अर्थात्- स्मृतियों में मनु के संविधान की सर्वोच्च स्थिति है और सर्वोच्च प्रामाणिकता है।

**- गुड़गांव, हरियाणा**

## दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें।

**- मन्त्री**

## वैचारिक क्रान्ति के लिये सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

## ऋषि उद्यान में ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों, संन्यासियों को साधना, स्वाध्याय, सहयोग के लिए निमन्त्रण

अजमेर में **ऋषि उद्यान** आनासागर नामक झील के सुरम्य तट पर स्थित है। इसका संचालन महर्षि की उत्तराधिकारिणी श्रीमती परोपकारिणी सभा करती है। वृक्षावलियों एवं पुष्पोद्यान से सुशोभित यह आश्रम महर्षि-भक्तों का ध्यान आकर्षित करता रहता है। इस आश्रम में ही सभा द्वारा विभिन्न प्रकल्प संचालित किए जा रहे हैं। यहाँ देशी गायों की वृहद् गोशाला है, ब्रह्मचारियों के विद्याभ्यास के लिए गुरुकुल की व्यवस्था है। समागत अतिथियों के निवास व भोजन इत्यादि की उत्तम व्यवस्था है। इस आश्रम में दोनों समय सन्ध्या व यज्ञ का आयोजन किया जाता है। यह स्थान स्वाध्याय, योगाभ्यास एवं विद्याप्राप्ति का आदर्श केन्द्र है। समय-समय पर विभिन्न कार्यक्रमों, योगशिविरों, आर्यवीर-वीरांगनाओं के शिविरों, विशिष्ट विद्वानों के व्याख्यान इत्यादि का आयोजन इसकी जीवंतता के प्रमाण हैं।

**सभी आर्य ब्रह्मचारियों तथा विशेषत: वानप्रस्थियों, संन्यासियों से निवेदन है कि अपनी आध्यात्मिक उन्नति एवं तप-स्वाध्याय के लिए स्थायी रूप से आश्रम में रहकर अपने जीवन को सार्थक करें तथा अपनी योग्यतानुसार सभा के प्रकल्पों में सहयोग करें।**

ऋषि उद्यान में सोद्देश्य निवास करने के लिए इच्छुक आर्यजन कृपया अधोलिखित चलभाष-दूरभाष पर सम्पर्क करें -

१. श्री ओम्मुनि वानप्रस्थ (प्रधान) - 9950999679
२. श्री कन्हैयालाल आर्य (मन्त्री) - 9911197073
३. श्री रमेशचन्द्र आर्य, (ऋषि उद्यान) -9413356728

## *** निवेदन ***

कीर्तिशेष आचार्य धर्मवीर जी ने अपने दानदाताओं के सहयोग से ऋषि उद्यान में निरन्तर चलने वाले ऋषि लंगर की व्यवस्था की थी, जो सतत संचालित हो रही है। इसमें ऋषि उद्यान की वृहद् भोजनशाला में **ऋषि उद्यान में निवास करने वाले योगसाधकों, संन्यासियों-वानप्रस्थियों, ब्रह्मचारियों व आचार्यों के भोजन, दुग्ध, फल इत्यादि की व्यवस्था की जाती है।**

ऋषि उद्यान में आने वाले अतिथियों, विद्वानों, दर्शनार्थियों इत्यादि के निवास तथा भोजनादि की व्यवस्था इसके अन्तर्गत संचालित की जाती है।

आर्य दानदाता-परिवारों के सहयोग से ही यह अतिथि-यज्ञ सम्भव हो पा रहा है। अत: हम सभी आर्य परिवारों का दायित्व एवं कर्त्तव्य है कि हम इस यज्ञ में होता बनकर निरन्तर दान-रूपी आहुति प्रदान कर पुण्य के भागी बनें। विभिन्न संस्कारों एवं अन्य शुभावसरों पर अपनी दान-रूपी आहुति देना न भूलें, ताकि यह लोकोपकारी अतिथि यज्ञ निरन्तर चलता रहे।

इस अतिथि यज्ञ हेतु आप ५१००/-( **पाँच हजार एक सौ रुपये** ) **प्रतिवर्ष** भेजकर अपना सहयोग प्रदान कर अनुग्रहीत करें।

**ओम्मुनि**
**प्रधान**

**कन्हैयालाल आर्य**
**मन्त्री**

## शोक सन्देश

### श्रीमती परमेश्वरी देवी का निधन

वैदिक पथ के पथिक चौधरी मित्रसेन जी आर्य की धर्मपत्नी व हरियाणा के पूर्व वितमन्त्री कैप्टन अभिमन्यु की माता जी श्रीमती परमेश्वरी देवी का निधन ८९ वर्ष की आयु में हो गया जिनका अन्तिम संस्कार २१ जून २०२५ को किया गया। आप देशभर के अनेक गुरुकुलों व आर्य समाजी संस्थाओं में अग्रणी भूमिका निभाती आई हैं। उनका परिवार व समाज के प्रति प्रेम, त्याग और उच्च संस्कार सदैव अमिट रहेगा। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जली।

### श्री शंकरलाल शर्मा दिवंगत

श्री शंकरलाल शर्मा जयपुर निवासी का देहावसान ९२ वर्ष की अवस्था में दिनांक १० अप्रैल २०२५ को हो गया। श्री शंकरलाल जी वैदिक संस्कृति के प्रति निष्ठावान्, दैनिक अग्निहोत्री, दानवीर, स्वाध्यायशील, सरल, मृदुभाषी, व्यवहार कुशल व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति थे। आपने समाज सुधार व भामाशाह का अनुपम कार्य किया। आप आर्यसमाज कृष्णपोल बाजार के वरिष्ठ उप प्रधान रहे। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जली।

# ऋषि मेला-२०२५

# शुक्रवार, शनिवार, व रविवार ७, ८ व ९ नवम्बर २०२५

# परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर

| पुस्तक का नाम | पृ. सं. | वास्तविक मूल्य रुपये | छूट के साथ मूल्य रुपये |
|---|---|---|---|
| महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग) | १३९२ | ८०० | ५०० |
| महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र | ३३६ | २०० | १०० |
| कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग) | ९३८ | ९५० | ६०० |
| डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग) | ८१४ | ५०० | २५० |

**यजुर्वेद भाष्य ( महर्षि दयानन्द सरस्वती ) पृष्ठ संख्या- २१९७, चार भागों का मूल्य = १३००/-**
**डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = ११००/-**
**पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382**

---

**VEDIC PUSTKALAYA**
**0510800A0198064**
**1342679A**
**0510800A0198064.mab@pnb**

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु
खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर
**(VEDIC PUSTKALAYA, AJMER)**
बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक,
कचहरी रोड, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-
**0008000100067176**
**IFSC - PUNB0000800**
**UPI ID :**
**0510800A0198064.mab@pnb**

## प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में सञ्चालित आर्ष गुरुकुल में प्रवेश प्रारम्भ हैं। वैदिक धर्म के उपदेशक-प्रचारक बनने के इच्छुक युवा प्रवेश हेतु शीघ्र आवेदन करें।

प्रवेश हेतु अविवाहित एवं आठवीं उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। भोजन एवं आवास की नि:शुल्क सुविधा है। **सम्पर्क सूत्र: ८८९०३१६९६१**

## आर्य संस्थाओं से आग्रह

**आर्य समाज एवं अन्य आर्य संस्थाएं अपने निर्वाचन, वार्षिकोत्सव और योग शिविर आदि आयोजन के संक्षिप्त समाचार परोपकारी में प्रकाशनार्थ भिजवा सकते हैं।**

# संस्था की ओर से....

## क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं।

### आपका दान ८०जी ( आयकर की धारा ) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

***अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।***

### अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है।

दूरभाष - 8890316961

### परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

**खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

# 'सत्यार्थ प्रकाश' एवं 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' ने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अत: परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष **'सत्यार्थप्रकाश'** के साथ **'महर्षि का जीवन-चरित्र'** एवं **'आर्याभिविनय'** पुस्तक का वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है।

एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। ५०० **से कम प्रतियों पर स्टिकर लगाकर तथा ५०० या अधिक प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित किया जाएगा।**

१५० रु. प्रति सैट के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं।

| | | |
|---|---|---|
| न्यूनतम | २० प्रतियाँ | ३०००/- रु. |
| | ३० प्रतियाँ | ४५००/- रु. |
| | ५० प्रतियाँ | ७५००/- रु. |
| | १०० प्रतियाँ | १५०००/- रु. |
| | ५०० प्रतियाँ | ७५०००/- रु. |
| | १००० प्रतियाँ | १,५०,०००/- रु. |

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी राशि दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। धन्यवाद।

**- कन्हैयालाल आर्य, मंत्री, परोपकारिणी सभा**

## सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

**खाताधारक का नाम**

**परोपकारिणी सभा, अजमेर**

**(PAROPKARINI SABHA AJMER)**

**बैंक का नाम**

**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

**10158172715**

**IFSC - SBIN0031588**

**UPI ID : PROPKARNI@SBI**

# दानवीर धर्मनिष्ठ श्री शिवकुमार चौधरी का निधन
# परोपकारिणी सभा की भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

आर्यसमाज के श्रेष्ठ धर्मनिष्ठ वैदिक धर्म के अनुयायी तथा प्रतिष्ठित औद्योगिक समूह प्रतिभा सिन्टेक्स लि. के चेयरमैन श्री शिवकुमार चौधरी जी का दिनांक 17 जून, 2025 को आकस्मिक देहावसान हो गया। परोपकारिणी सभा ने उनके निधन पर गहरा शोक व्यक्त किया है। सभा ने अपने शोक प्रस्ताव में कहा कि उनके निधन से न केवल उनका परिवार, अपितु सम्पूर्ण आर्यसमाज एवं धर्मप्रेमी समाज एक महान् समाजसेवी, धर्मनिष्ठ विचारक एवं उदार हृदय पुरुष से वंचित हो गया है। श्री चौधरी जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन सादगी, सेवा, त्याग एवं वैदिक मर्यादाओं के अनुरूप व्यतीत किया। वे सदैव महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों का अनुपालन करते हुए सच्चे आर्य के रूप में जीवन पथ पर अग्रसर रहे।

श्री चौधरी जी गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रति अत्यन्त समर्पित थे। आपने देश के विभिन्न गुरुकुलों को सतत आर्थिक सहायता प्रदान की एवं निर्धन, असहाय बालकों के उज्ज्वल भविष्य हेतु अनेक योजनाओं को मूर्तरूप दिया। परोपकारिणी सभा से जुड़े सेवकवृन्द के बच्चों की शिक्षा के लिए उन्होंने सदैव उदार सहयोग प्रदान किया।

आपका संकल्प था कि सत्यार्थप्रकाश जैसे महान् ग्रन्थ की ज्योति प्रत्येक घर तक पहुँचे। इसी उद्देश्य से वे प्रति वर्ष विश्व पुस्तक मेला में नि:शुल्क वितरण हेतु सतत सक्रिय रहते एवं जनमानस को इसके पठन हेतु प्रेरित करते।

उनका यह जीवन परोपकार, धर्मसेवा एवं राष्ट्रहित की प्रेरणा देने वाला है। उनके निधन से उत्पन्न रिक्तता की भरपाई निकट भविष्य में सम्भव नहीं प्रतीत होती।

परोपकारिणी सभा के प्रधान श्री ओम् मुनि एवं मन्त्री श्री कन्हैयालाल आर्य ने कहा कि सभा परिवार की ओर से हम दिवंगत वैदिक धर्म के अनुयायी को कोटिश: श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं एवं परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वे उनकी आत्मा को शाश्वत शांति एवं परमगति प्रदान करें। साथ ही, शोकाकुल परिवार को इस दु:खद क्षण को सहन करने की संवेदना, धैर्य एवं शक्ति प्रदान करें।

आर जे/ए जे/80/2024-2026 तक प्रेषण : ३० जून २०२५ आर.एन.आई. ३९५९/५९

# वैदिक ज्ञानदीप के प्रज्वलन हेतु श्री आर्य का उदात्त दान
## 51 लाख की पावन भेंट

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के कुलाधिपति एवं जे.बी.एम. समूह के यशस्वी अध्यक्ष, श्रद्धेय सुरेन्द्र कुमार आर्य जी ने वैदिक साहित्य के संरक्षण और संवर्धन हेतु ऐसा दिव्य कार्य संपन्न किया है, जो स्वर्णाक्षरों में अंकित किए जाने योग्य है।

परोपकारिणी सभा के सुशिष्ट प्रतिनिधि-मण्डल से भेंट के पावन प्रसंग पर श्री आर्य ने सभा को रु. 51 लाख की धनराशि का चेक समर्पित किया। यह दान उनके पूज्य माता-पिता की पावन स्मृति में 'विशुद्धा रामरिछपाल आर्य वैदिक साहित्य धरोहर' शीर्षक से समर्पित किया गया है। इस निधि से वैदिक साहित्य के अमूल्य ग्रंथों का प्रकाशन किया जाएगा।

श्री आर्य ने कहा कि परोपकारिणी सभा का यह प्रयास केवल वैदिक ग्रंथों के मुद्रण का कार्य नहीं, अपितु भारतीय आत्मा की सांस्कृतिक पुर्नस्थापना का एक विराट संकल्प है। यह कार्य वैदिक ज्ञान के दिव्य प्रभा से सम्पूर्ण राष्ट्र को आलोकित करेगा, और ऋषियों की वाणी पुन: जन-जन के हृदय में गुंजायमान होगी।

उन्होंने विश्वासपूर्वक कहा कि यह पहल न केवल आध्यात्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को संरक्षित करेगी, अपितु आने वाली पीढ़ियों को वैदिक ऋचाओं की सुरभि से सुवासित भी करेगी। यह कार्यक्षमता आर्य समाज के उन दुर्लभ ग्रंथों का नवजीवन है, जिनकी ज्ञानधारा युगों-युगों तक प्रवाहित होती रहेगी।

इस पुण्य अवसर पर परोपकारिणी सभा के मंत्री श्री कन्हैयालालआर्य, संयुक्त मंत्री डॉ. दिनेश शर्मा, कोषाध्यक्ष श्री लक्ष्मण जिज्ञासु, पुस्तकाध्यक्ष आचार्य विरजानंद दैवकरणि, कार्यकारिणी सदस्य श्री वीरेंद्र आर्य तथा जेबीएम समूह के वरिष्ठ अधिकारीगण भी साक्षी बने।


प्रेषक:

**परोपकारिणी सभा**

दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर ( राजस्थान ) ३०५००१


सेवा में,

डाक टिकिट